दिसम्बर 2014 वार्षिक मूल्य ₹ 150

साधन

संस्थापक : समर्थ गुरु परम संत डा. चतुर्भुज सहाय जी

ॐ

रामाश्रम सत्संग, मथुरा

ॐ

साधन

दिसम्बर-2014

अनुक्रमणिका

✵ ✵ ✵

संरक्षक :

परमभागवत ब्रह्मलीन परम संत

पण्डित मिहीलाल जी

❖ ❖ ❖

नवनीत हृदय ब्रह्मलीन परमसंत

डॉ. बृजेन्द्र कुमार जी

❖ ❖ ❖

युगपुरुष परमसंत

श्रीयुत् हेमेन्द्र कुमार जी

❖ ❖ ❖

प्रेममूर्ति ब्रह्मलीन परमसन्त

डॉ. नरेन्द्र कुमार जी

❖ ❖ ❖

पूर्व सम्पादक :

श्री ओम प्रकाश विरल

❖ ❖ ❖

आनरेरी सम्पादक परिवार

सम्पादक :

कृष्णकान्त शर्मा

❖ ❖ ❖

सह-सम्पादक :

रुद्र प्रसाद मिश्र

महेश चन्द्र शर्मा

❖ ❖ ❖

उप-सम्पादक :

अमित कुमार

शिव प्रसाद शर्मा

डॉ. एल. एस. चौहान

❖ ❖ ❖

प्रबन्ध सम्पादक :

आलोक कुमार

ॐ

साधन

वेद-मंत्र

उदुतमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं चृत।
अवाधमानि जीव से।

– हे परमात्मन्! हमारे उत्तम पाश को खोलो, मध्यम को काटो और सुन्दर मानव जीवन जीने के लिए अधम को भी छिन्न-भिन्न कर दो ।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

वर्ष : 82 अंक : 5	दिसम्बर-2014	वार्षिक मूल्य : ₹150.00 इस अंक का : ₹16.00

-: सिखावन :-

भाई रे इन नैननि हरि देखो।
हरि भगति साध की संगति, सोई दिन धनि लेखौ।।1।।
चरन सोइ जे नचत प्रेम सूँ, कर सोई जे पूजा।
सीस सोइ जो नवै साध कूँ, रसना अवर न दूजा।।2।।
यह संसार हाट का लेखा, सब कोइ बनजहिं आया।
जिन जस लादा तिन तस पाया, मूरख मूल गंवाया।।3।।
आतमराम देह धरि आया, तामे हरि कूं देखो।
कहत 'नामदेव' बलि-बलि जैहों, हरि भजि और न लेखों।।4।।

– सन्त श्री नामदेव जी

अमृत बिन्दु :–

शिष्य के तीन दर्जे

– परम पूज्य श्री गुरुदेव

जहाँ तक देखने में आता है सत्संगों में शिष्यों के अधिकतर तीन भेद पाये जाते हैं। पहला- प्रारंभिक शिष्य, दूसरा वास्तविक शिष्य, और तीसरा प्रेमी शिष्य शिष्य के अर्थ सीखने वाले से है। जब कोई मनुष्य जिज्ञासा लेकर किसी महान पुरुष के सम्मुख उपस्थित होता है और क्रिया जान के साधन में लगता है तो उसका नाम प्रारंभिक शिष्य या 'मुरीद इब्तदाई' है। ऐसों का भरोसा नहीं होता कि यह दृढ़ता के साथ आगे चलेंगे या बीच में ही छोड़ बैठेंगे। इसलिये गुरु लोग न तो उनपर विश्वास लाते हैं, न अपना आदमी ही समझते हैं, और न असली विद्या के गुप्त रहस्यों को उन पर खोलते हैं। यदि कुछ दिन पीछे छोड़ बैठा तो उससे कोई मतलब नहीं, उसकी परवाह नहीं, और यदि आज्ञा पालन करता चला गया, अपने साधन को श्रद्धा पूर्वक निबाहे गया तो आध्यात्मिक विद्या का द्वार उसके लिये खोल देते हैं। इसमें अधिकारी और अनधिकारी की परीक्षा भी हो जाती है और आगे के लिये वह अपने मल और आवरणों को साफ कर तैयार भी हो जाता है।

पिछले युगों में शिष्यों की कठिन परीक्षाएँ ली जाती थीं। वर्षों उन्हें खिदमत में हाजिर रहने का हुक्म दिया जाता था। तरह-तरह की सेवाएँ उनसे कराई जाती थीं, तब आत्मज्ञान का उपदेश उन्हें दिया जाता था, पर आजकल यह शैली बदल गई है। शिष्यों की कोई परीक्षा नहीं ली जाती, प्रथम दिन से ही उन्हें उपदेश दे दिया जाता है। रास्ता पर डाल दिया जाता है। यदि वह चलते दिखायी दिये तो गुरु ने अपना लिया और आगे सहारा दिया वर्ना उनसे उदासीन हो गये।

प्रारंम्भिक अवस्था में किसको कितना समय लगेगा, इसकी कोई अवधि नियत नहीं है । कोई -कोई महीने और पन्द्रह दिन में ही गुरु को अपना बना लेते हैं, वह उनके विश्वास पात्र बन जाते हैं और कोई वर्षों लटकते रहते हैं। यह अपने-अपने संस्कारों और भावों की बात है। गुरु लोग अपनी निज दृष्टि से पूर्व जन्म के संस्कारों को देख लेते हैं और उसी के अनुसार उसे शिक्षा देते हैं। हमको भी इस प्रारंभिक श्रेणी में सात वर्ष व्यतीत करने पड़े थे तब कहीं मंजूर हो पाये थे।

इतना जरूर था कि इस दौरान में जहाँ तक हमको याद है, हमने कभी उनकी आज्ञा भंग नहीं होने दी और उनके बताये हुए साधन को नहीं

छोड़ा, पूर्ण श्रद्धा और निष्ठा से उसको किए चले गये। वह लाभ दे रहा है या हानि, इस नतीजे की ओर हमने आँख उठाकर भी नहीं देखा, तबीयत जमती है या नहीं, आनन्द मिलता है या नहीं, इस पर कभी नहीं विचारा। अन्धविश्वासी जैसा उनका हुक्म बजाते रहे और उसी का फल यह आज आपके सामने है। यही शिष्य का कर्त्तव्य है कि अपनी अकल न लगावे, अपने साधन को न छोड़े, श्रद्धा पूर्वक आज्ञा का पालन करता जाय और परिणाम पर दृष्टि न डाले, अच्छा या बुरा जो कुछ हो उसी के सम्मुख रख दे और अपने को उसी पर छोड़ दे।

जो लोग इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो लेते हैं, उन्हें दूसरी कक्षा में दाखिल कर लिया जाता है और इनको अब से वास्तविक शिष्य या 'मुरीद सादिक' कहा जाता है । शिक्षा का आरंभ यहीं से समझना चाहिये। इनसे गुरु का कोई भेद छुपा नहीं रहता, जैसे भी बन सकता है गुरु इनको ऊपर उठाता है और इन्हें पार लगाता है। चाहे वह काम उनसे परिश्रम लेके किया जाय अथवा अपनी निज शक्ति द्वारा कर दिया जाय। फिर गुरु उसे त्यागता नहीं है। ऐसों से उदासीन और लापरवाह भी नहीं होता। हमेशा उसकी निगरानी करता है। गलती या भूल हो जाने पर सजा देता है। हृदय से पुत्रवत् उस पर प्यार करता है; पर बाहर-बाहर कभी-कभी बहुत सख्ती का व्यवहार करता है। अहंकार तोड़ने के लिये सबके सम्मुख अपमान करता है, खड़ा रखता है, निकाल देता है, फिर प्यार करता है। कहाँ तक कहें जलील भी करता है, और कभी गोद में ले मुख भी चूमता है। इस प्रकार ठोंक पीट के, गढ़ गढ़ा के उसे अपने योग्य बनाता है। जो इन सब दशाओं में एक-सा रहता है, सख्ती के समय भागने का विचार नहीं लाता, फटकार के समय दिल में नाखुशी नहीं आने देता और उसी के आस पास चक्कर लगाता रहता है ऐसा मनुष्य 'मुरीद सादिक' या सच्चा शिष्य कहलाता है। ऐसे लोग न सीखें तो भी उन्हें सिखाया जाता है, न पीना चाहें तब भी जबर्दस्ती मुँह खोल के अमृत की बूँद उनके गले में डाली जाती है, साधन में परिश्रम न करना चाहें तो भी आवश्यकता होने पर डण्डे मार के उनसे मिहनत कराई जाती है।

ऐसे लोग गुरु दरबार से भाग नहीं सकते, भागने की बात ही उनके दिल में नहीं आती और भाग के जायेंगे भी कहाँ, गुरु की शक्ति तीनों लोक में उनके साथ होगी। जहाँ भी जायेंगे वहीं पकड़े जायेंगे और फिर सजा मिलेगी। हमलोगों ने यह सब सहन किया था। न जाने दिन में कितनी बेर फटकार के दरबाजे से बाहर किए जाते थे, और कितनी बेर अन्दर बुलाके समीप में बिठाये जाते थे। उन दिनों का कैसा आनन्दमय जीवन था, कैसे मीठे प्रेम के खेल थे। सुधि आते ही आँखों में आँसू छलकने लगते हैं दिल की धुक धुकी चलने लगती है। जब इतना बन जाता है तब गुरु और शिष्य का रिश्ता जुड़ता है और जुड़ जाने पर किसी काल में उसे दोनों में कोई भी नहीं तोड़

सकता। फिर तो पीछा ही नहीं छूटता, जब देखो तब संग-"पाछे-पाछे गुरु फिरै कहत कबीर-कबीर।"

जिनमें सच्ची लगन हो उन्हें चाहिये कि सच्चे शिष्य बनने का उद्योग करें, अपना आपा खोके अपनी इज्जत को ताक में रख के छोटे से छोटे गुलाम बन के उनके चरणों में जायें, हर समय हाथ जोड़ खड़े रहें, इसी में कल्याण होता है। जो लोग जीवन भर प्रथम श्रेणी में ही पड़े रहे उनके लिये न तो गुरु है, न गुरु की विद्या है। वह तो अभी तैयारी में ही हैं। चूँकि कर्म निष्फल नहीं जाता इसलिये समय आवेगा कि वह भी अपना काम पूरा करेंगे, मगर नहीं कहा जा सकता कि एक ही जन्म में या कई जन्मों में। शास्त्रों में यह जो आया है कि एक ही गुरु जन्म जन्मान्तर संग रहता है, यह नियम प्रथमावस्था वालों पर लागू नहीं होता क्योंकि वह तो अभी मुख्य शिष्य बने ही नहीं, इनके इस जीवन में भी अनेक गुरु बन सकते हैं और दूसरे जन्मों के भी दूसरे गुरु हो सकते हैं।

दूसरी श्रेणी के कुछ लोग और आगे बढ़ जाते हैं और वह प्रेमी भक्त बन जाते हैं, पर ऐसे विरले ही सहस्रों में एक दो होते हैं। इनका क्या कहना है? वे उस दीपक के पतंगे हैं, उस सूरत के आशिक हैं, उस मूर्त्ति के दीवाने हैं, अपना सर्वस्व तन,मन,धन, हर समय उनके चरणों में न्योछावर करने के लिये तैयार रहते हैं। इन्हें अपने गुरु के सिवा और कोई पुरुष संसार में दीखता ही नहीं। हर समय उसी की ओर खिंचे रहते हैं। संसारी सारे ही सम्बंध ढीले पड़ जाते हैं, सारी लोक और परलोक की इच्छाएँ हृदय से चली जाती हैं, अपना आपा गुरु में गुम हो जाता है, उसकी खुशी में खुश रहते हैं, उसकी मर्जी पर चलते हैं और समय आने पर अपनी जान तक को कुरबान करने को तैयार रहते हैं। इन्हें 'मुरीद फिदाई' या प्रेमी शिष्य कहा जाता है। जो इस दर्जे को पहुँच गया, जिसने अपने को ऐसा बना लिया उसके लिये संसार का या परमार्थ का कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जो सुलभ न हो । मुक्ति की कोई लालसा उसे नहीं है, पर मुक्ति हर समय उसके लिये हाथ बाँधे खड़ी रहती है। वासना रहित होने के कारण वह तो सदा जीवन मुक्त ही है। गुरु की सारी कमाई उसकी अपनी है, भेद-भाव, अपना-पराया तो प्रथम श्रेणी वालों में होता है, यहाँ तो दोनों मिल के एक हो जाते हैं, दूरी रहती ही नहीं।

जब मैं था तब गुरु नहीं अब गुरु हैं मैं नाहिं ।
प्रेम गली अति साँकरी जामें दो न समाहिं ।।

✦✦✦

मैं एक दिन मर जाऊँगा, यह शरीर नाशवान है, इस शाश्वत सत्य को भूलकर मैं यह कर लूँ और मैं वो कर लूँ, ऐसा मनुष्य सोचता रह जाता है और उसकी आत्मपरिष्कार जैसी महत्वपूर्ण आवश्यकता अधूरी रह जाती है।

सम्पादकीय

कारण का कारण

मानव मात्र की एक सहज प्रवृत्ति है अज्ञात को ज्ञात करना । एक बालक जब पैदा होता है तो संसार उसके लिये एक नूतन कौतूहल का विषय होता है । सारा जगत अज्ञात ही अज्ञात उसके सामने है लेकिन उसमें एक मूल प्रवृत्ति है जानने की । उसकी दृष्टि में आई चीजों को वह जानने का प्रयास करता है कि यह क्या है वह क्या है ? उसमें वाणी भी नहीं है, बोल भी नहीं पाता लेकिन हृदय में प्रेम का जज्बा है । उस प्रेम से वह पहचानता है कि यह मेरी माँ है । दोनों प्रेम करते हैं और बड़ा होता है तो पिता को जानता है अपने भाई बहनों को पहचानने लगता है । वाणी नहीं हैं लेकिन अपनों को अपने हृदय में छिपे प्रेम से पहचानने लगता है । घरवाले जानते हैं इससे काम चलेगा नहीं इसकी बुद्धिको जागृत करना है । ज्ञान प्राप्त करने के लिये केवल पहचानने से काम नहीं चलेगा । ज्ञान बहुत विस्तृत है और उधर अज्ञान बहुत विशाल है । वे चाहते हैं बालक की बुद्धि जाग्रत हो । विद्यालय भेजते हैं । वहाँ बालक पढ़ते-पढ़ते आगे बढ़ता जाता है और एक दिन वैज्ञानिक बन जाता है । प्रकृति के तत्वों का ज्ञान अर्जन करता है । हवा की परमाणु रचना क्या है और इसका कारण क्या है ? पानी है तो इसका कारण क्या है। हर परमाणु का कारण जानने लगता है। पानी क्यों बना ? हर प्रकृति तत्वों का कारण और उन तत्वों का निर्माण कैसे हुआ उसे जानने में लगा रहता है । लेकिन प्रकृति के निर्माण का कारण क्या है और उस कारण का कारण क्या है यह रहस्य उसके लिये एक पहेली बनी रहती है। उसके आगे उसकी बुद्धि काम ही नहीं कर पाती है । इधर धर्म में भी हम देखते हैं कि इन्सान इसी कारण की खोज में लगा है । अपनी-अपनी बुद्धि से हम धर्म पर चलते हैं और धर्म के बारे में जानने का प्रयास करते हैं । लेकिन सच्चाई यह है कि हमें ज्ञान नहीं है कि धर्म है क्या और धर्म का कारण क्या है ? हम कहते हैं भाई परमात्मा को मानना धर्म है । पर परमात्मा है क्या ? विज्ञान कहता है एक सुप्रीम पॉवर है जो सारी सृष्टि को चला रही है, सारा काम कर रही है । इधर धर्म कहता है परमात्मा चला रहा है । जितने भी कारण हैं उनके कारण परमात्मा हैं । विज्ञान की दृष्टि में जितने भी कारण हैं उनका कारण है सुप्रीम पॉवर। लेकिन सुप्रीम पॉवर क्या है ? परमात्मा क्या है ? वहाँ तक हमारी पहुँच नहीं है । गीता में भगवान

कृष्ण कहते हैं कि मैं ईश्वर हूँ। अर्जुन कहते हैं कि अगर आप ईश्वर हैं तो कैसे जानूँ आप ईश्वर हैं? यहाँ बहुत सुन्दर बात भगवान कृष्ण कहते हैं कि अर्जुन तू यह रहस्य जान सकता है लेकिन इन आँखों से नहीं । 'दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य योगमैश्वरम' तुझे मैं दिव्य नेत्र देता हूँ । उनसे जान पायेगा ईश्वर क्या है? ऐसे ही धर्म चाहे कितना ही प्रयास करे, विज्ञान चाहे कितना ही खोज करे लेकिन कारण का कारण क्या है जान नहीं पायेगा । उपाय क्या है ? भगवान कृष्ण ने स्पष्ट किया है । दिव्यं ददामि ते चक्षुः । जब हमारे चक्षु दिव्य हो जायेंगे तब प्रत्यक्ष अनुभव करेंगे कि परमात्मा क्या है, कारण का कारण क्या है । ईश्वर दर्शन कहने की बात नहीं रहेगी। यह अनुभव की बात होगी । ऐसा अनुभव तभी होगा जब दिव्य दृष्टि प्राप्त होगी । अब प्रश्न आता है कि यह दिव्य दृष्टि कैसे प्राप्त हो ? उसका उपाय भी बतलाते हैं भगवान कृष्ण गीता में । 'मन्मना भव मद्भक्तो माद्याजी मां नमस्कुरु' भगवान समझाते हैं तू मेरा मन वाला हो जा । अपनी बुद्धि मेरे में लगा दे । अहम् में मुझे बिठा ले- "सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज"। अर्थात् अपने मन में, अपनी बुद्धि में, अपने अहम् में मुझे भर लो । जब मैं भर जाऊँगा तेरे मन में, बुद्धि में एवं अहम् में जो प्रकृति तेरे अन्दर भरी थी वह निकल जायेगी, प्रश्न प्रकृति में थे । अज्ञान प्रकृति में था, आत्मा में ज्ञान है। भगवान कहते हैं तू यह कर लेगा तो तेरे यह नेत्र दिव्य हो जायेंगे । तब तू देख लेगा कि यह ईश्वर है । संसार रचना का कारण क्या है ? कारण का कारण क्या है ? यह दिव्य नेत्र हमें कैसे मिलें ? कैसे हम परमात्मा को जानें । गुरु महाराज की साधना यहाँ से शुरू होती है । धर्म के द्वारा या विज्ञान के द्वारा यह जिज्ञासा तो हो गई कि हम जानें इस सृष्टि का कारण कौन है ? यहाँ तक तो पहुँच गये । इसके आगे का रास्ता क्या है ? गुरु महाराज ने कहा कि इसके आगे का रास्ता जानने के लिये तुम्हें दिव्य दृष्टि चाहिये । उन्होंने कहा भगवान कृष्ण का सिद्धान्त तो वही है लेकिन तुम में यह शक्ति नहीं है तुम मुझे अपने मन में बिठा लो, अपनी बुद्धि में बिठा लो, अपने अहम् में बिठा लो । उन्होंने कहा कि यह जो साधना दे रहा हूँ वह तुम नहीं करोगे । तुम्हारे मन में मैं भरूँगा। जब मैं भर जाऊँगा तो उससे तुम्हारे मन में जो प्रकृति प्रदत्त विकार भरे थे वे निकल जायेंगे । बुद्धि में 'मैं' भर जाऊँगा तो उसमें जो अज्ञान भरा है वह निकल जायेगा । अहम् में जब भरूँगा तो उससे तुम्हारा 'मैं-मेरा' निकल जायेगा और सात्विक वृत्ति हो जायगी । मेरी वृत्तियाँ अशान्त थी प्रकृति के कारण । प्रकृति में समस्यायें थीं । प्रकृति निकल गई तो सहज ही मेरी चित्त की वृत्तियाँ शान्त हो गईं । मेरा मन भी शान्त है, बुद्धि भी शान्त, अहम् भी शान्त है पूर्ण शान्ति है । जैसे महर्षि पतञ्जलि कहते हैं- योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः । आपका योग हो गया ईश्वर के साथ । गुरु महाराज वहाँ तक ले गये । जब आपमें गुरु भर गया तो आपमें कुछ रहा

नहीं और सहज में समर्पित हो गये । आप अपने आप कभी समर्पित नहीं हो सकते हैं । गुरु शिष्य में खुद भर के समर्पण करा लेता है । सहज ही योग में प्रवेश करा दिया । परमात्मा से जुड़ गये। जुड़ने से परमात्मा का ज्ञान, परमात्मा का आनन्द आप में उतर आता है लेकिन इसका भी कारण जानना अभी शेष है । आनन्द का कारण क्या है? गुरु महाराज की साधना केवल योग की अवस्था तक पहुँचाने तक की नहीं है । परम पूज्य पंडितजी महाराज ने बहुत सुन्दर लिखा है यदि तुम प्रकृति से निर्पेक्ष होते गये तो न पद की लालसा रहेगी न मान सम्मान की, किसी से कोई आकांक्षा नहीं होगी । गुरु के चरण देखते चले जाओ । गुरु वहाँ ले जाना चाहता है जहाँ अच्छे योगी नहीं पहुँच सकते । गुरु वहाँ ले जाना चाहता है जहाँ आप कारण का कारण भी जान जाओगे। इस ज्ञान का, इस आनन्द का इस शान्ति का कारण क्या है ? आप जानते हैं जीव प्रकृति तत्वों से और आत्मा के संयोग से बना है । आत्मा पर प्रकृति का आवरण आ गया है । मैं बन गया हूँ । इस आत्मा में क्या है? आत्मा में परमात्मा है, यही कारण का कारण है । जैसे आप देखते हैं लाईट जल रही है। बल्ब तक एक तार आया है तार का अपने आप में कोई महत्व नहीं है । महत्व है तार में मौजूद बिजली का करेन्ट । ऐसे ही यह शरीर जो प्रकृति से बना है, एक आवरण है जिसने परमात्मा को ढक लिया। परमात्मा कारण है। हमारे गुरु महाराज ने कहा केवल योग से काम नहीं चलेगा । मैं तुम्हें वहाँ ले जाना चाहता हूँ जहाँ तुम प्रत्यक्ष जान जाओगे कि योग से प्राप्त ज्ञान और आनन्द का कारण क्या है और उससे कारण का कारण क्या है ? करना क्या होगा ? योग होने पर हम प्रकृति से निर्पेक्ष हो गये आत्मा से सापेक्ष हो गये । अब आत्मा है । गुरु महाराज ने उस आत्मा को इतना बारीक किया उसमें कोई विकार नहीं रहा । अब उसमें प्रकृति का संवेदन नहीं रहता केवल परमात्मा का संवेदन रह जाता है । जहाँ परमात्मा का संवेदन होता है मेरी आँख में आँसू आ जाते हैं । गला रुंध जाता है । कारण ? रवीन्द्र नाथ जी का एक भजन है वह कहते हैं साधना का फल ज्ञान नहीं है केवल प्रभु का प्रेम है । हमारे गुरु महाराज ने वही किया । मुझमें प्रेमा भक्ति भर दी । उन्होंने इतना निर्मल किया और मुझे परमात्मा के इतना निकट कर दिया कि अगर परमात्मा में एक हल्का सा स्पंदन होता है तो हम उस स्पंदन को अनुभव करते हैं । मेरी आँख में आँसू छलक जाते हैं । आनन्द में निमग्न रहता हूँ । ज्ञान और आनन्द के कारण को प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं । गोपियाँ कहती हैं 'निशदिन बरसत नयन हमारे'। ऐसा कोई कारण नहीं है, बैठा हूँ आँख में आँसू आ रहे हैं । परमात्मा का संवेदन है । एक सेन्सेशन परमात्मा के अन्दर हो रहा है । उस सेन्सेशन से मेरी आँखों से आँसू छलक आये । आनन्द के कारण प्रेम आपको वहाँ ले जाएगा जहाँ आपके अन्दर भक्ति पैदा हो जायेगी । जब अनन्य प्रेम पैदा हो जायेगा तो परमात्मा भी आप से मिलने के

लिये व्याकुल हो जायेगा । मेरे अन्दर जब मिलने की तड़प उठती है तो मेरे गुरु या परमात्मा के अन्दर भी ऐसी ही तड़प उठती है । वह मिलन के लिए विवस हो जाता है वह शवरी से मिलने के लिये जंगलों की खाक छानता फिरता है। दुर्योधन के मेवा मिश्री को छोड़ कर गंगापार विदुरानी के केले के छिलके खाकर सन्तुष्ट हो जाता है, गोपियों के चरणों की धूल को मस्तक से लगाकर शान्ति की अनुभूति करता है । कारण मेरे गुरु की कृपा से हम और वह दो शरीर और एक प्राण हो गये हैं । वह आनन्दघन है अत: उससे जुड़ कर मैं भी उस परमानन्द में निमग्न हो गया । मेरी आंखों में वही वसा है मेरे मन में वही है मेरा पूरा शरीर उससे मिल कर पुलकित हो गया है । महाभागवत पुराण के ग्यारहवें स्कन्ध में स्वयं भगवान अपने श्री मुख से कहते हैं कि मैं उन संतपुरुषों के पीछे-पीछे घूमता रहता हूँ ताकि उनके चरणों की धूल उड़कर मेरे ऊपर पड़ जाये और मैं कृतार्थ हो जाऊँ । जैसे एक शिशु सहज प्रेम से अपनी मां को जान जाता है । ऐसे ही हम भी किसी समर्थ गुरु कृपा से हृदय में प्रकट किए प्रेम व भक्ति से उस पूर्ण पिता को जान जाते हैं और बड़ी सहजता से वही हमारा माता पिता- 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव...' सब कुछ हो जाता है, हम भी उस पूर्ण से मिल कर पूर्ण हो जाते हैं । मैं और मेरे गुरु अभी तक दो थे । वह गुरु थे मैं सेवक था । गुरु ने एक परदा कर रखा था, मेरी आखों में एक परदा था । गुरु ने कृपा कर अपना परदा हटा दिया । मेरी आँखों का परदा भी खोल दिया । अब तमाशा ही कुछ और हो गया। 'गुरु साक्षात परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम:' मेरा जीवन कृतार्थ हो गया है, रग-रग में वही बस गया । ✦✦✦

प्रेरक प्रसंग

संत मार्टिन लूथर एक बहुत बड़े संत थे। उन्हें हमेशा समाज की बेहतरी की चिंता रहती थी। वह समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठाकर लोगों को समाज सुधार की प्रेरणा देते थे।

उनके इस व्यवहार के कारण कुरीतियों को बढ़ावा देने वाला और उसका पोषक वर्ग उनसे नाराज रहता था। एक बार ऐसे ही एक वर्ग ने संत लूथर के समाज-सुधार कार्यों से बौखलाकर संत एवं उनके शिष्यों के विरुद्ध हंगामा मचाना शुरू कर दिया। वे लोग जब भी संत मार्टिन लूथर या उनके शिष्यों को देखते, तो बेवजह गालियां बकते, फब्तियां कसते और उन पर पत्थर फेंकने लगते। उन दुराचारियों के उत्पीड़न से तंग आकर कुछ शिष्यों ने संत जी से कहा, लगता है, हमें भी इनकी गालियों का जवाब गालियों से देने पर मजबूर होना पड़ेगा और इन्हें सबक सिखाना होगा।

संत लूथर ने उन्हें समझाया, ऐसा करने पर दुराचारियों और हमारे सदाचारी अनुयायियों के बीच क्या अंतर रह जाएगा। दूसरों के दोष ढूंढ़ना जिनकी आदत बन गई है, उन्हें इस कुप्रवृत्ति से बचाना ही हमारा उद्देश्य है। यदि हम भी उनकी तरह परनिंदा में लग गए, तो क्या अपने महान उद्देश्य से भटक नहीं जाएंगे। समाज सुधारकों को अपने मन, वाणी और विचारों में संयम रखना जरूरी होता है। संत लूथर के अनुयायी शांत हो गए। वे समझ गए कि समाज-सुधार के काम में ऐसी बाधाएं आती रहती हैं।

प्रवचन–पराग :–

शान्ति प्राप्ति में सन्तों का योग

– परम भागवत परम संत पं. मिहीलाल

यह अनुभव में आता है कि संसार में अशान्त और दु:खियों की संख्या बहुत बढ़ी हुई है । सोचा था कि मनुष्य सम्भवत: धन पाकर शान्त हो जाय, परन्तु परिणाम विपरीत ही निकला । धन पाकर मनुष्य को शान्ति नहीं मिली । ज्यों-ज्यों धन बढ़ता गया अशान्ति की अग्नि में घी की आहुति पड़ती गई और आज उसकी लपटें ऐसी प्रचण्ड हुईं कि सारा विश्व भस्म हुआ जा रहा है।

फिर सोचा कि विद्या ही शान्ति का कारण हो, इसलिये संसार में विद्या का प्रचार हुआ । नगर-नगर, गाँव-गाँव, घर-घर लोग विद्या पढ़ने लगे। विद्यालयों की संख्या इतनी बढ़ी कि छोटे-छोटे गावों में भी कालेज दिखाई देने लगे । परन्तु ज्वाला और भी धधकती गई और आज वह अनपढ़ों को तो क्या पढ़े लिखों को भी जला कर भस्म किये डाल रही है ।

यह तो बात रही संसार की । अपने देश की दृष्टि जब इस ओर गई तो यहाँ के लोगों ने भी यही सोचा कि किसी भाँति हमारा देश भी बढ़े और सुख शान्ति प्राप्त करे । परन्तु यहाँ एक महान विपत्ति देख, वह थी परतंत्रता, सोचा इसके नाश किये बिना शान्ति आकाश के कुसुम ही है लोगों ने कठिन तप किये, अनेकों ने प्राणों की आहुतियाँ दीं देश ने सब कुछ त्याग कर, सहन कर स्वतंत्रता को प्राप्त कर ही लिया । परन्तु दुर्भाग्य! शान्ति माता ने फिर भी दृष्टि इस ओर नहीं की और अशान्ति के बादल उमड़ते-घुमड़ते ही रहे यहाँ तक कि आज उनकी जल धारा इतनी बढ़ी कि चारों ओर अशान्ति का सागर लहराने लगा । यह सब किया तो गया शान्ति और आनन्द के लिये परन्तु पदार्पण हुआ अशान्ति का । इस बीच इसी के लिये बड़े-बड़े महान परिवर्तन भी हुए, राजाओं को अशान्ति का प्रतीक समझ राज्य से अलग कर दिया । धन वालों और जमींदारों को अपना शोषक समझ उनका वहिष्कार किया। यह कोई हमारा साधारण काम नहीं था, इतिहास के पृष्ठों में वैसा महान परिवर्तन बहुत समय से पढ़ने में नहीं आता । इस समय में अनेक देश परतंत्रता से निकल स्वतंत्रता के शिखर पर पहुँच गये, अनेक असभ्य देश सभ्यता को प्राप्त कर गये। वह "खोतर का विज्ञान पक्षी आज पर फैला कर इतना उड़ा कि असंख्य मीलों की आकाश में यात्रा कर गया, परन्तु कहीं से शान्ति का सन्देश लेकर वह भी लौट कर नहीं आया ।" आज शान्ति क्षितिज की तरह दिखाई देती है, परन्तु क्या क्षितिज को आज तक कोई पा सका

है ? ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते जाते हैं वह उसी प्रकार हमसे दूर होती चली जा रही है । रात-दिन सुख के बदले दुःख, शान्ति के बदले अशान्ति और स्वास्थ्य के बदले अस्वस्थता मुँह बाये चली आ रही है जिसके कारण सारा संसार भयभीत और दुःखी है ।

इसका कारण

क्या आपने कभी इस ओर विचार किया है ? हाँ, जब हम विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि उनके परिश्रम में कमी नहीं थी । हमने जिस काम के लिये परिश्रम किया वह सफल भी हुआ । हमारा परिश्रम था भौतिक जगत के सुधार के लिये । अस्तु जगत का कुछ सुधार तो अवश्य हुआ । परन्तु भौतिक जगत मानसिक जगत का साया है, मन के खिन्न रहने से मनुष्य प्रसन्न चित्त नहीं रह सकता । यदि मन चिन्तित और दुःखी है तो शरीर के सारे सुख, दुःख रूप ही दिखाई देते हैं। आखिर ऐसा क्यों ? इसका एकमात्र कारण है मन को शान्ति के स्रोत से हटा कर अशान्ति के स्रोत से लगा देना । मन ही हमारे शरीर में ऐसी इन्द्री विशेष है जो सारे सुख और दुःख का अनुभव करती है । सुख शान्ति मन में भी नहीं है, वह आनन्द तो आत्मा में है । आत्मा से विमुख होकर कोई भी शान्ति लाभ कर सके यह असम्भव है । हम लोगों से भूल यही हुई है कि शान्ति के लिए मार्ग विपरीत ग्रहण कर लिया। इस थोड़े से जीवन के लिये इतनी अनावश्यक वस्तुओं का संग्रह करने लगे कि उनकी चिन्ता में अपने को शान्ति के लिए तैयार ही नहीं कर पाए। यह तो ध्रुवसत्य है कि चिन्ता से शरीर और मन दोनों का ह्रास ही होता है इससे तो मनुष्य बिल्कुल बेकार हो जाता है । चिंता सर्पिणी का विष उसके जीवन को दिशाहीन बना डालता है, उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ निर्बल हो जाती हैं, शरीर काम नहीं देता। इस तरह शरीर और मन का सारा प्रबन्ध ही अस्त व्यस्त हो जाता है । चिन्ता से मनुष्य असमय में ही बूढ़ा सा दिखाई देने लगता है । उसके बाल श्वेत हो जाते हैं, चेहरे पर झुरियाँ पड़ जाती हैं और अनेक घातक रोग उसके शरीर में घर बना लेते हैं । हमारा विचार तो यह है कि यदि कोई मनुष्य अपने को चिन्ताओं से मुक्त करले तो इससे बड़ा पुरुषार्थ दूसरा नहीं हो सकता । जो मनुष्य इस चिन्ता से छूटने का उपाय ढूँढ़ लेगा, वह संसार का बहुत बड़ा उपकार कर सकता है । वह सर्वनाश तक के भयानक दुःखों से संसार को बचा ले जाएगा जो प्रतिक्षण उसे उधर बहाये लिये जा रहे हैं । संसार में सब से बड़ा उपकारक वही है जो मनुष्यों को इस संसार की चिन्ता रूपी अग्नि से निकाल कर आशा और आनन्द रूपी वाटिका में लाकर खड़ा कर दे । देखते नहीं कि चिन्ता मनुष्य को अनेकानेक भयानक रोग जैसे पागलपन, मिर्गी, पाण्डुरोग, स्वेद, क्षय, सन्तान का अङ्ग-भंग होना आदि प्रसाद के रूप में प्रदान कर रही है ।

बताते हैं कि मनुष्य के शरीर में तीन प्रकार की नाड़ियाँ हैं और उन सब का केन्द्र स्थान हृदय क्षेत्र है । इनमें प्रथम वे नाड़ियाँ है जो हृदय से

शुद्ध रक्त ले जाकर सारे शरीर में पहुँचाती हैं, जो लालरङ्ग की देखने में आती हैं । दूसरी वह नाड़ियाँ जो अशुद्ध रक्त को शरीर के कोने-कोने से वापिस लाकर दिल के पास शुद्ध करने को लाती हैं इनका रङ्ग कुछ नीला सा होता है । तीसरी वह ज्ञान तन्तु जो सारे शरीर में जाल की भाँति फैले हुए हैं । इनकी संख्या बहत्तर करोड़ बतलाई गई है । इनमें होकर सारे शरीर में स्फूर्ति, ज्ञान,प्रकाश, शुद्धता और स्वास्थ्य फैलता है । जब हृदय में प्रसन्नता और स्फूर्ति होती है तो यह सारे ज्ञान तन्तु सम्पूर्ण शरीर में प्रसन्नता भर देते हैं। यदि चिन्ता और दु:ख हुआ तो सारा शरीर चिन्तित और दु:खमय हो जाता है । इसलिए मुख्य बात आती है हृदय को प्रसन्न रखने की, मन को निश्चिंत बनाने की, परन्तु यह बात जितनी कह देने में सरल है उतनी ही करने में कठिन भी है। इसमें क्या करना होगा यह भी कभी सोचा है?

उपाय

इसके लिए मन को अपने अधिकार में लाना होगा; उसे शान्त और स्थिर करना होगा । जब वह अपने वश में हो जाय, तब उसे अशान्ति के केन्द्र से हटा शान्ति के केन्द्र से मिला देना होगा । बस इतने से ही वह शान्ति की अनन्त धाराओं से भरपूर हो जायगा । चिन्ता और शोक सदैव के लिये विदा हो जायँगे और सारे ज्ञान तन्तुओं में शान्ति का नाद जागृत हो जायगा । भाग जायेंगी वह बलाएँ जो हमें दु:खी कर रही थीं, छुप जायेंगे वह उलूक जो अन्धकार में चिन्ता की वायु छोड़ रहे थे, मिट जाएगा वह अन्धकार जो हमें साफ देखने नहीं देता था ।

कोई कठिन नहीं

यह सब कठिन नहीं है परन्तु है वैसा ही जैसे स्वप्न में किसी को जङ्गल में रीछ घेर ले। वहाँ अपना बल कुछ काम नहीं देता, बस आवश्यकता है एक ऐसे साथी की जो जाग रहा हो और हमें भी किंचित स्वप्न से जाग्रत में ले आवे । हम सभी इसी दु:ख में है । शान्ति में बैठे हुए भी अशान्ति का स्वप्न देख रहे हैं । इस दु:ख ने लगभग सभी को दु:खी किया है और तो क्या यही वह महाभारत है जिससे अर्जुन घबरा कर भगवान से सहायता माँगता है । अच्छे-अच्छे शूर वीर धनुष छोड़ कर भाग खड़े होते हैं, बड़े-बड़े धैर्य मैदान छोड़ जाते हैं । पार केवल वही होता है जो सारे संकटों से मुक्त, सारी चिन्ताओं से परे; आनन्द के घन भगवान की शरण जाता है । इसीलिये वेदों ने तथा हमारे शास्त्रों ने यही उपदेश दिया है कि तुम इसके लिये भगवान से प्रार्थना करो । वे ग्रंथ प्रार्थनाओं से भरे पड़े हैं । कोई भी दु:ख हमें दु:खी करे प्रभु से प्रार्थना करें । जहाँ हमारा बल काम न दे, भगवान से बल की याचना करें । जहाँ हमारा ज्ञान काम न दे प्रभु से ज्ञान की भिक्षा माँगे । वह हमारी सहायता अवश्य करेंगे ।

शान्ति के लिये हमें दूर जाना नहीं है, पर्वतों और गुफाओं में खाक नहीं छाननी, वह तो हर मानव को लपेटे हर हृदय में रहती है । शान्ति के तार ही विरुद्ध गति देने से अशान्ति की तरंगें

छोड़ने लगते हैं । संतों ने इसे खूब समझ कर देख लिया है, परख लिया है । इसीलिये जब हमारी शान्ति प्राप्ति के लिये प्रार्थना होती है तो वह संत पुरुष ही हमें उस शान्ति का दर्शन कराते हैं । क्योंकि संत स्वयं नहीं आते, उस आनन्द घन शान्ति स्वरूप परमात्मा की प्रेरणा ही से आया करते हैं । हम उनके उपदेश सुनें, उनकी बतलाई हुई राह पर चलें, उनके सत्सङ्ग का लाभ उठायें तो शान्ति सम्मुख उपस्थित हो जायगी । शान्ति और कुछ नहीं उन सत्पुरुषों का साया ही है जो संसार के तपे हुए लोगों को कल्प वृक्ष के समान शीतलता प्रदान करता है ।

सन्त बतलाते हैं कि शान्ति के मुख्य स्रोत संतोष और दया ही हैं । दूसरों पर दया करो, उनके कष्टों को बटाओ, बस जहाँ उस घट में शान्ति की वीणा बजी कि आपकी हृदय-तंत्री भी शान्ति के स्वर अलापने लगेगी, इसके लिये अपनी ओर दृष्टि करो, अपने पापों और कृत्यों को देखो । यदि हम पापी होकर भी दया के इच्छुक हैं तो हरएक पर दया करें । जब हम दूसरों के दिल को दु:ख देंगे तो तत्काल ही हमारे शान्ति के तार अशान्ति में बदल जायेंगे । महात्मा ईसा और मुहम्मद साहब के समय में वहाँ के देशों में ऐसा नियम था कि जिससे कुछ पाप हो जाय और उसका पता चल जाय तो उसे यह दंड दिया जाता था कि वह एक जगह बाँध कर खड़ा कर दिया जाय और हर एक मनुष्य उसके पत्थर मारता जाय जब तक कि उसकी मृत्यु न हो जाय । कहते हैं कि एक बार किसी स्त्री से कुछ पाप कर्म बन गया, राज्य के कानून के अनुसार मैदान में खड़ी हो गई और पत्थरों के मारने का आदेश हुआ । ईसा वहाँ होकर निकले जहाँ वह असहाय बाला नग्न रूप में खड़ी किसी दयावान की प्रतीक्षा कर रही थी । लोगों के हाथों में बड़े 2 पत्थर थे, मारने को तैयार ही थे कि ईसा उधर आ निकले और बोले–

"भाई ! इसने पाप किया है, इसके पत्थर जरूर मारो, परन्तु पत्थर मारने का वही अधिकारी है जिसने कोई पाप आज तक नहीं किया हो ।"

"और सबसे पहिला पत्थर वह मारे जिसके मन से, वाणी से तथा शरीर से कोई भी पाप न हुआ हो ।"

लोगों के हाथ ढीले हो गये, पत्थर पृथ्वी पर गिर पड़े । किसी का साहस नहीं हुआ कि उस अबला पर पत्थर फेंके । इसीलिये कहा गया था कि शान्ति के प्राप्त करने के लिये किसी संत का सङ्ग और दया का अवलम्बन लो । उसी के द्वारा हम अपने अभीष्ट तक पहुँच सकेंगे ।

जिस प्रकार वृक्ष में साया समाहित है उसी प्रकार संतों में शान्ति भी समाहित है । वृक्ष साया देता नहीं, हम उसके नीचे पहुँचते ही उसे पा जाते हैं । ऐसे ही संत ईश्वर के प्रतीक हैं । उनमें भी शान्ति है, उनके पास पहुँचने से अनायास वह हमें प्राप्त होती है । इसकी उनके यहाँ कमी नहीं है । जिसका जितना जी चाहे ले, भरे और पिए ।

सुधा-सार

समर्पण से प्रथम परीक्षा

— प्रेममूर्ति परमसंत डॉ. नरेन्द्र कुमार जी

3 दिसम्बर परमपूज्य, परमसंत छोटे भैया का अवतरण पर्व। पढ़ें उनके एक प्रवचन को-मात्र पढ़ें ही नहीं मनन भी करें और अपने जीवन में, व्यवहार में उतारें भी ....सं.

प्राचीन काल की बात है । भगवान बुद्ध यात्रा पर थे । वह जिस गाँव में ठहरते, वहाँ सुबह-शाम सत्संग जरूर होता । एक दिन वह एक गाँव में ठहरे हुए थे । वहाँ बहुत अधिक लोग आए तो उनके मुख्य शिष्य बोले कि भगवन, यह गाँव तो बहुत अच्छा है । यहाँ बहुत सारे भक्त हैं । उस समय भगवान बुद्ध मुस्करा कर रह गए । शाम को जब सत्संग सभा होने वाली थी तो उन्होंने कहा कि देखो ऐसा करो, सबसे अलग-अलग जाके पूछना कि इस समय भगवान आ जायें तो तुम क्या माँगोगे । उसने यही किया । बाद में आकर बोला कि भगवन, सब यह कहते हैं कि इस समय भगवान आ गए तो मैं अपनी इच्छा की पूर्ति कराऊँगा । मेरे लड़के की शादी हो जाए । केवल एक मनुष्य है जो उनसे प्रेम की भिक्षा माँगना चाहता है । सच यही है कि हम सत्संग में आते हैं, परन्तु हैं अपनी इच्छाओं के दास । इच्छा एक ऐसी चीज है कि एक इच्छा पूर्ण होती है तो दूसरी उठ खड़ी होती है । संसार में ऐसे विरले ही होते हैं जो सचमुच परमात्मा को प्राप्त करना चाहते हैं । अधिकतर अपनी इच्छाओं के पीछे दौड़ते रहते हैं । गुरुमहाराज कहते थे कि जब नये साधक आते हैं तो उनको इस मार्ग में लगाने के लिए हम उनकी एक-दो इच्छा पूर्ण कर देते हैं । फिर उनको रस आने लगता है तो साधना में लग जाते हैं । हो सकता है कि उस समय के साधक ऐसे हों । आज मैं देखता हूँ कि वह इसके विपरीत हैं जितने सत्संगी मिलते हैं उनमें 95 प्रतिशत अपनी इच्छाओं के अलावा और कोई बात नहीं करते ।

सच यह है कि अगर आप अध्यात्म प्राप्त करना चाहते हैं तो इन इच्छाओं के प्रति थोड़ा उदासीन होना पड़ेगा । यह नहीं है कि आप संसार की तरफ उदासीन हो जाँय तो आपके काम गलत होंगे, विपरीत इच्छा के होंगे । गुरुमहाराज के एक गुरुभाई थे । उनके एक शिष्य मुझे एक बार बता रहे थे कि मैं एक टाइपिस्ट हूँ । एक बार मैंने एक प्रयोग करके देखा कि जब मैं टाइप कर रहा था

तो अपने गुरुमहाराज का चिन्तन करते हुए टाइप किया । बीच में मुझे भय लगा कि कहीं दूसरे विचार (गुरुमहाराज के चिन्तन) के कारण गलतियाँ अधिक हो गईं तो साहब नाराज होंगे और मैंने देख-देख कर टाइप करना प्रारम्भ कर दिया । बाद में देखा तो जितने पेज मैंने गुरुमहाराज के चिन्तन करते हुए टाइप किए थे उसमें एक भी गलती नहीं थी, लेकिन जो देख-देख कर टाइप किया उसके हर पेज में एक-दो गलतियाँ थीं । तो ऐसा नहीं है कि यदि आप इच्छाओं के प्रति थोड़ा उदासीन हो जाँय तो आपके काम गलत होंगे परन्तु उससे आपकी अध्यात्म में उन्नति होगी।

आप सब जानते ही हैं कि भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कहा था कि सबसे सरल साधन यह है कि तू मेरे मन वाला हो जा । जो मैं चाहूँ वैसा कार्य कर । अपनी सारी इच्छायें मेरी इच्छा में मिला दे । यही बात गुरुमहाराज भी कहते थे कि अपना मन मुझे देते जाओ, जितना दोगे उतनी आध्यात्मिक उन्नति होती जायेगी । यह नहीं है कि हमारे यहाँ ही यह बात है और धर्मों में भी यही प्रचलन है । हजरत मूसा फिलिस्तीन में नबी हुए हैं । उन्होंने कालान्तर में यहूदी धर्म की स्थापना की । उनके जीवन की एक घटना है कि एक बार वह साधना कर रहे थे-तो उनको ऐसा इलहाम हुआ कि खुदा उनसे पूछ रहा है कि ऐ मूसा क्या तू चाहता है कि मैं तेरा हो जाऊँ । तो उन्होंने कहा कि नहीं । तो फिर दुबारा आवाज आई कि क्या तू चाहता है कि तू मेरा हो जाए । तो उन्होंने कहा नहीं । तो फिर पूछा कि तू क्या चाहता है । तो उन्होंने कहा कि मैं तेरी मर्जी का कद्रदां हूँ । जो तेरी इच्छा हो वह कर । यही वह बात है जो भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कहा था कि तू मेरे मन वाला हो जा ।

ऐसा ही एक दृष्टान्त एक मुसलमान फकीर का भी है । वह अरब देश में एक बहुत बड़े व्यापारी थे। हर व्यक्ति के जीवन में एक समय आता है, जब उसको परमात्मा की याद आती है। इनको भी ऐसा ही लगा कि अब मुझे खुदा की तरफ चलना चाहिए । इन्होंने लोगों से दरयाफ्त किया कि भाई खुदा की राह में कोई अच्छा फकीर हो तो बताओ । एक शख्स मिला उसने बताया कि इस पहाड़ी पर चले जाओ । वहाँ एक फकीर तप कर रहे हैं । ये वहाँ पर गए तो देखा कि एक फकीर एक पेड़ से उल्टे लटके हुए अपने मन को भला-बुरा कह रहे हैं । इन्होंने कहा कि हुजूर, आप ऐसे उल्टे क्यों लटके हैं? बोले कि भाई क्या करूँ यह मन मेरे वश में नहीं आता । मैं इसको बहुत समझाता हूँ लेकिन यह तो अपनी राह चलता है । मैं इसे सजा दे रहा हूँ कि मैं तुझे भूखा-प्यासा मार दूँगा । तू मेरे कहने में चल तभी मैं उतरूँगा । इन्होंने कहा कि मुझे भी खुदा की राह में कुछ बता दीजिए । तो बोले, नहीं। मुझसे एक और अच्छे फकीर हैं वह दूसरी पहाड़ी पर रहते है, तुम वहाँ चले जाओ । यह उस पहाड़ी से उतर कर दूसरी पर गए । वहाँ देखा कि एक टाँग कटी हुई बाहर पड़ी है और अन्दर एक फकीर

बैठे हैं। उन्होंने पूछा कि हुजूर यह क्या है ? तो उन्होंने कहा कि देखो मैं तीस साल से इस कुटिया में तपस्या कर रहा था । मुझे ऐसा लग रहा था कि मैंने मन को वश में कर लिया लेकिन यहाँ से एक सुन्दरी निकली तो मैं उसके पीछे दो कदम चल दिया । फिर मुझे होश आया तो मैंने यह टाँग काट दी जिसने यह गलत कदम उठाया, और मैं पश्चाताप कर रहा हूँ । उन्होंने उनसे भी प्रार्थना की कि आप मुझे बता दें तो मैं भी इस पर चलूँ। तो इन्होंने कहा कि नहीं । यहाँ से और ऊपर एक फकीर रहते हैं, उनके पास जाओ । उन्होंने कहा अब मुझ में तो दम नहीं है । आप ही उनकी साधना पद्धति बता दो तो वह बोले कि देखो वह जब फकीर बने तो अच्छा स्वास्थ्य था । वे साधना करते और दूसरों से माँग कर खाते थे । लोगों ने उनको झिड़कना शुरू किया कि इतने हट्टे-कट्टे हो, खुद कुछ काम नहीं करते, निठल्ले हो और हम लोगों की मेहनत की कमाई माँगते फिरते हो। यह बात उनको चुभ गई और उन्होंने सब कुछ त्याग कर उस पहाड़ी पर एक झोंपड़ी बना ली और ईश्वर की साधना में मग्न हो गए कि अब मैं किसी से कुछ नहीं मागूँगा । दे तो वही दे ।

जब ऐसी स्थिति आती है तो पहले उसका इम्तिहान होता है । इनकी हालत ऐसी हो गई कि अब प्राण गए, अब गए तो भगवान ने उनके लिए इन्तजाम किया । मधुमक्खी कहीं से आईं और उनकी झोंपड़ी में छत्ता बना दिया । उसमें से शहद उनके ऊपर टपकने लगा जिसको खाकर उनके शरीर में ताकत आई और फिर वहीं साधना करते रहे । इनको यह समर्पण की राह अच्छी लगी और वह इसी प्रकार की साधना में लग गए । उनके जीवन का एक प्रसंग है कि एक बार वे टाइग्रस नदी पर नाव में बैठे थे । उसमें मोती के कुछ व्यापारी भी थे । एक व्यापारी का मोती खो गया तो उसने चारों तरफ तलाश किया । लोगों से पूछा, जब नहीं मिला तो कहने लगा कि यह फटे कपड़े पहने जो फकीर बैठा है इसी ने लिया होगा । सब लोग इनको मारने लगे । पिटते-पिटते जब इनका बहुत बुरा हाल हो गया तो बोले कि या खुदा अब सहा नहीं जाता । मैं कुछ न कहूँगा, जो तेरी मर्जी हो वह कर । उस समय जब इन्होंने यह कहा तो बहुत सारी मछलियाँ अपने मुख में एक एक मोती लेकर नदी में से निकलीं और नाव के चारों तरफ खड़ी हो गईं । उन्होंने एक की जगह दो मोती लिए और उस व्यापारी को दे दिए । तब उस व्यापारी को यह खयाल आया कि मैंने बहुत बड़ा गुनाह किया, और उनसे माँफी माँगी । उस समय से उनका नाम जुलनैन हो गया यानी मछलियों के सरदार ।

जब हम ईश्वर को समर्पण करना चाहते हैं। तो उससे पहले एक बार इम्तिहान अवश्य होता है । जैसी इनकी भी हालत हुई थी । अब प्रश्न यह उठता है कि यह क्या है ? जब हम पूर्ण रूप से ईश्वर के या गुरु के अधीन हो जाते हैं तो हमारे योगक्षेम का वाहक वह होता है, परन्तु पहले वह देखता है कि यह मेरे ऊपर पूर्ण भरोसा कर रहा है या नहीं। जैसे आपने सुना होगा कि द्रौपदी

के चीरहरण के समय जब तक वे अपने इधर-उधर देखती रहीं भगवान ने उनको सहायता नहीं दी । जब अंत में वह सब तरफ से निराश हो गईं तभी उनको सहायता प्राप्त हुई । लेकिन जब मनुष्य गुरुमुख या ईश्वर के मन वाला होता है तो उसमें एक सावधानी रखनी पड़ती है । सावधानी यह है कि हमारी विचार शक्ति तो वह कार्य नहीं कर रही । जब मनुष्य साधना करता है तो जैसे एक नदी पर एक बाँध बना दो तो उससे जो धारा निकलेगी वह बहुत शक्तिशाली होती है । उससे आप कई मशीनें चला सकते हैं । इसी प्रकार जिसका मन शान्त हो जाता है, उसके मन में जो विचार आएगा वह बहुत शक्तिवान होगा और उस विचार के कारण वह कार्य जो उसने सोचा है पूर्ण हो जाता है इसलिए यहाँ पर इस बात की खबर रखनी चाहिए कि कहीं यह मेरे उस विचार के कारण तो नहीं है ।

इसके बारे में स्वामी विवेकानन्द का एक उदाहरण है । एक बार वे भारतवर्ष में यात्रा कर रहे थे । यात्रा लम्बी थी । दो तीन दिन से उन्होंने न कुछ खाया था, न पिया था । प्यास के मारे दम छटपटा रहा था । वे एक स्टेशन पर उतरे । हाथ-पैर धोकर एक पेड़ के नीचे साधनारत हो गए । जब कोई साधक गुरुमुख होता है, गुरु में ही उसका मन लय रहता है । उसकी इच्छाओं में अपनी इच्छा मिला देता है तो उसका योगक्षेम का वाहक गुरु होता है । उस समय जब यह साधना कर रहे थे तो उसी गाँव में एक हलवाई दोपहर का भोजन करके सो रहा था । वह राम भक्त था । तो उसको ऐसा लगा कि भगवान राम उससे कह रहे हैं कि देखो, मेरा एक भक्त वहाँ उस स्टेशन के पास पेड़ के नीचे भूखा बैठा है--तीन चार दिन का उसके लिए भोजन ले जाओ । आप सब जानते ही होंगे कि परमहंस रामकृष्ण कहते थे जो राम थे, जो कृष्ण थे, वही मैं हूँ । उस हलवाई की आँख तो खुली पर उसने सोचा कि अरे यह तो सपना था । वह फिर सो गया । दूसरी बार उसको फिर वैसी ही आवाज सुनाई दी । वह फिर सो गया । तो फिर तीसरी बार उसने देखा कि भगवान राम झुंझलाकर कह रहे हैं कि अरे तू कैसा आदमी है, मैंने तीन बार कहा पर तू मेरी बात की परवाह नहीं कर रहा। उसके लिए खाना नहीं ले जा रहा और उसको दिखा दिया कि देखो ऐसा रूप है, उस पेड़ के नीचे बैठा है । वह जल्दी से उठा, कपड़े पहने और जो भोजन सामग्री तैयार थी, वह लेकर दौड़ पड़ा। जब स्वामी विवेकानन्द के सामने पहुँचकर उसने यह भोजन सामग्री रखी तो उन्हें यही विचार आया कि कहीं यह मेरे विचार के कारण तो नहीं हुआ । उन्होंने उससे कहा कि भाई देखो, मैं तो यहाँ अभी आया हूँ । हो सकता है यहाँ पहले कोई साधु रहा हो उसी को ढूँढ़ कर दे दो । उसने कहा कि नहीं । मैं और किसी के लिए नहीं आया हूँ और उसने पूरी बात बता दी । यह बात सुनकर विवेकानन्द की आँखों से अश्रु झरने लगे कि उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस ने कितना कष्ट किया और फिर उन्होंने उनकी इच्छा जानकर उसको ग्रहण किया । ऐसे शिष्य गुरुमुख शिष्य कहलाते हैं । हम जब तक अपनी इच्छाओं के दास हैं, हम मनमुख कहलाते हैं।

◆◆◆

बटाऊ बाट के

— श्रीयुत् प्रभुदयाल शर्मा

हम सब मनुष्य बाट के बटाऊ ही तो हैं अर्थात् उस अनन्त पथ के पथिक ही हैं, रास्तागीर हैं । अनन्त जन्मों से जीवमात्र इस अनन्त यात्रा पर है परन्तु यह यात्रा समाप्त ही नहीं हो पा रही है, ऐसी है यह अदभुत यात्रा, लम्बे रास्ते का तो अन्त आता है परन्तु गोल चक्र का अन्त कैसे हो ? ऐसी ही है गोल चक्र की यात्रा, इस यात्रा में मिलन भी और वियोग भी है । गुरु भक्ता सहजो बाई की वाणी देखें।

'बैठि बैठि बहुतक गये जग तरुवर की छाँव।'
सहजो बटाऊ बाट के मिलि मिलि बिछुरतजाँय।।'

मानव उस यात्री के सदृश इस यात्रा में चलता ही जा रहा है परन्तु विडम्बना यह है कि वह अपने गन्तव्य स्थान को ही भूल बैठा है, कहाँ पहुँचेगा ऐसा यात्री ? ऐसे ही यात्री के लिये कबीर साहब कहते हैं–

'नाम न जानूँ गाँव का बिन जाने कित जाउँ।
चलते चलते जुग भया पाव कोस पै गाँव ।।'

कैसे और कब तक ऐसा यात्री अपनी मंजिल को प्राप्त कर पायेगा ? उसी के लिये परम भागवत पंडित जी महाराज कहते हैं–

'इसलिये जीवन में एक साथी तलाश लेना, जब सच्चा साथी मिल जाय तो उस पर श्रद्धा और विश्वास लाना, उसकी आज्ञा का पूर्ण पालन करना' । ऐसी अनोखी यात्रा में ऐसे ही एक साथी की परम आवश्यकता है। ऐसे सच्चे साथी के संग में यह यात्रा सुगम एवं सुखद हो जायेगी। अर्जुन जैसे वीर पुरुष ने भगवान कृष्ण के रूप में ऐसे ही साथी को प्राप्त किया । महाभारत युद्ध अवश्यम्भावी था, अतः अर्जुन और दुर्योधन दोनों ही भगवान कृष्ण के समक्ष सहायतार्थ पहुँचे । भगवान कृष्ण ने दो विकल्प रखे, एक ओर तो मेरी नारायणी सेना और दूसरी ओर स्वयं और वह भी निःशस्त्र, भक्त को भगवान् का ही सानिध्य श्रेयस्कर है, भक्त भगवान् को प्राप्त कर कृतार्थ हो गया । भगवान भी प्रसन्न ऐसे भक्त को प्राप्त कर, इतना ही नहीं वे स्वयं अर्जुन के सारथी ही बन गये । भला जिसके सारथी स्वयं भगवान ही हों वह तो फिर निश्चिंत ही है । कितनी विपत्तियों, कितनी मुश्किलों में अर्जुन जैसे भक्त को उन परमेश्वर का अभयदान प्राप्त हुआ । महाभारत के युद्ध के पश्चात् संजय जैसे भक्त महाराज धृतराष्ट्र से कहते हैं–

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिमीतिर्मम ।।

अर्थात् हे राजन् ! जहाँ योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीव धनुर्धारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है- ऐसा मेरा विश्वास है । ऐसे ही समर्पित भक्त की रक्षा करने को भगवान भी आतुर रहते हैं ।

यह संसार एक रैन बसेरे जैसा ही है । परम भागवत पण्डित जी महाराज लिखते हैं- 'जगत को एक सुंदर प्लेटफार्म समझो । कोई अधिक ठहरेगा भी नहीं और कभी खाली भी नहीं मिलेगा।' जीवन यात्रा की रेल में अंग संग बैठे हुये सहयात्रियों की तरह अपने होते हुये भी अपने नहीं होते क्योंकि उनकी सम्बद्धता कुछ निहित स्वार्थों व संचित कर्मों के तहत अलग-अलग होती है । उनका गन्तव्य और मंतव्य भी उसी अनुपात में भिन्न भिन्न होता है । कोई यहाँ उतरा कोई वहाँ उतरा, इसी प्रकार उतरते चढ़ते चले जाते हैं । ये रैन बसेरे तो उस महायात्रा के क्षणिक विश्राम स्थल हैं जहाँ दिन भर के थके माँदे आदमी रात्रि व्यतीत करने के लिये ठहर जाते हैं, प्रातः काल होते ही अपनी यात्रा पर चल निकलते हैं परन्तु मानव तो ऐसा यात्री है जो उस क्षणिक विश्राम स्थल को अपना गन्तव्य मानकर ठहर जाता है और यात्रा अधूरी रह जाती है । इस संसार रूपी रैन बसेरे को अपना मान लेता है क्योंकि आकर्षण ही ऐसा होता है कि वह दिग्भ्रमित हो जाता है । वह पुनः पुनः उस महायात्रा के लिये चलता है परन्तु इस विचित्र आकर्षण के कारण उसकी यात्रा पूरी नहीं हो पाती है । जन्मजन्मान्तर से यही तो होता चला जा रहा है, क्या करे ? पहुँचना था इन बसेरों के आखिरी पड़ाव पर जहाँ से तृष्णाओं, कामनाओं, आकर्षणों की इस जगत यात्रा की पुनरावृत्ति न हो, अतः हम उस पिता की चिंता करें, वह हमारी चिंता निश्चित करेंगे ही क्योंकि वह पिता हैं, गुरु हैं, सर्वस्व हैं ।

मनुष्य एक दो राहे पर खड़ा हुआ है, उसके समक्ष दो रास्ते खुलते हैं एक दक्षिण की ओर तो दूसरा उत्तर की ओर जाता दिखलाई देता है । शास्त्रीय भाषा में पहले को प्रेयस और दूसरे मार्ग को श्रेयस कहा जाता है । दक्षिण की ओर जाने वाले मार्ग में बड़ा ही आकर्षण दिखलाई पड़ता है, वहाँ बहुत से लोग आमोद प्रमोद में मस्त दिखते हैं, बहुत खुश नजर आते हैं । इधर एक सब्ज बाग सा नजर आता है मृग तृष्णा की तरह, हटात मनुष्य उधर ही को चला जा रहा है क्योंकि मन वहाँ ही सुखानुभूति प्राप्त कर रहा है । प्रेयस वही तो है जो मन को प्रिय लगे, मन तो रसिक है अतः उसे वही अच्छा लग रहा है परन्तु वास्तविकता तो यह है कि वहाँ अन्ततोगत्वा दुःख हैं, बाद में पश्चात्ताप ही हाथ रह जाता है जैसा कि एक सूफी शायर नजीर मियाँ लिखते हैं-

'है बहारे बाग दुनियाँ चन्द रोज ।
देख लो इसका तमाशा चन्द रोज ।।
ऐ मुसाफिर कूच का सामान कर ।
इस जहाँ में है बसेरा चन्द रोज ।।'

प्रेयस मार्ग प्रारंभ में तो बड़ा लुभावना,

आकर्षण तथा विस्तृत दिखलाई देता है, आगे चलने पर बड़ा दु:खदायी हो जाता है इस मार्ग में फँसकर मनुष्य फिर कहीं का नहीं रह जाता है इसके विपरीत श्रेयस प्रारम्भ में बड़ा ही तंग सा कष्ट दायक प्रतीत होता है क्योंकि यह मन के माफिक नहीं है बल्कि बिपरीत ही है परन्तु जब यात्री उधर बढ़ने लगता है । तब वह देखता है कि यहाँ तो बड़ा आनन्द है, शान्ति है , ऐसे श्रेयस के मार्ग में उसे अपना कल्याण दिखलाई देता है ।

वास्तविकता तो यह है कि श्रेय कल्याणकारी है जब कि प्रेय बन्धन का कारण है । श्रेय निवृत्ति है जबकि प्रेय अविद्या अर्थात् प्रवृत्ति है । श्रेय में आनन्द है प्रेय में दु:ख ही दु:ख बाद में आते हैं। परम समर्थ गुरुमहाराज की अमोघ वाणी में श्रेय और प्रेय की सुन्दर व्याख्या का दिग्दर्शन करें — 'श्रेय परमार्थ है और प्रेय संसार, श्रेय विद्या है और प्रेय अविद्या, श्रेय आत्मा की ओर ले जाता है और प्रेय दुनियाँ में लाकर फँसाता है, श्रेय ब्रह्मानन्द का रसपान कराता है जब कि प्रेय विषयानन्द का भोग कराता है, वह निवृत्ति है यह प्रवृत्ति है, वह हितकारी है और यह अहितकारी । इसमें सन्देह नहीं कि सच्चाई का मार्ग तंग है उसमें कुछ दिन कष्ट झेलने पड़ते हैं, दिल भी घबरा जाता है, कभी-कभी हिम्मत भी टूटने लगती है, यार दोस्त वेबकूफ बनाते हैं, घर वाले भी ताने कसते हैं अन्तर में एक अशान्ति सी छायी रहती है पर यह सब बखेड़ा थोड़े काल ही रहता है आगे का रास्ता साफ हो जाता है । सारी मुश्किलें एक-एक करके हट जाती हैं, फिर तो घर बाहर सब जगह प्रशंसा होने लग जाती है, यही शास्त्रों का बताया हुआ श्रेय मार्ग है ।' संसार में दो ही प्रकार के भक्त प्रसन्न एवं निश्चिंत रहते हैं- एक तो भोला भाला नन्हा सा शिशु और दूसरा परम ज्ञानी गुणातीत महापुरुष– **'यो विमुग्धो जड़ो बालो यो गुणेभ्य: परं गत:'**। भगवान राम के जीवन में यही देखने को मिलता है । भगवान् को राज्याभिषेक की सूचना प्राप्त हुई तो वे न अधिक प्रसन्न ही हुये और जब दूसरे दिन ही प्रात: काल वन जाने का आदेश हुआ तब वे मन में खिन्न भी नहीं हुये । **'प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवास दु:खत:'** । राज्याभिषेक की सूचना प्राप्त कर राम प्रसन्न नहीं हुये बल्कि विचार करने लगे कि यह अनुचित है–

'जनमे एक संग सब भाई ।
भोजन सयन केलि लरिकाई ।।
करनबेध उपबीत बिआहा ।
संग संग सब भये उछाहा ।।
बिमल बंस यह अनुचित एकू ।
बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू ।।'

राम विचार मग्न हो जाते हुये सोचते हैं कि हम चारों भाई एक साथ जन्मे, एक ही साथ भोजन शयन तथा खेलते रहे । यहाँ तक कि एक ही साथ हम सबके कर्णभेद, यज्ञोपवीत, विवाह आदि सब उत्सव उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुये । फिर इस विमल रघुवंश की यह परम्परा अनुचित सी प्रतीत होती है कि अन्य भाइयों को छोड़कर

बड़े भाई का राज्याभिषेक हो । यह हैं श्रेयस मार्ग के पथिक के सुन्दर भाव । उधर राम को चौदह वर्ष के लिये सन्यासी वेष में बन जाने का आदेश प्राप्त कर न मन में ग्लानि ही हुई बल्कि वे यह विचार करने लगे यह तो बड़ा ही मेरे लिये हितकर है बड़ा शुभ है क्योंकि बन में तो मुझे–

'मुनिगन मिलनु बिसेषि बन, सबहिं भाँति हित मोर।'
तेहि महँ पितु आयसु, बहुरि संमत जननी तोर।।
भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू ।
बिधि सब बिधि सनमुख आजू ।।
जो न जाऊँ बन ऐसेहु काजा ।
प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा ।।'

पुनः राम माँ कैकेयी से पूछ बैठते हैं कि माँ मुझसे कुछ अपराध तो नहीं बन पड़ा जिससे महाराजा दशरथ मेरे पिता इतने दुःखी जान पड़ते हैं–

'थोरिहिं बात पितहि दुख भारी ।
होति प्रतीति न मोहि महतारी ।।'
राउ धीर गुन उदधि अगाधू ।
भा मोहि ते कछु बड़ अपराधू ।।
जातें मोहि न कहत कछु राऊ ।
मोरि सपथ तोहि कहु सति भाऊ ।।

ऐसे महामानव राम के विषय में भक्त तुलसीदास जी की वाणी है–

'धन्य जनमु जगतीतल तासू ।
पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू।।'
चारि पदारथ कर तल ताके ।
प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके ।।

ऐसे श्रेयस पथ के पथिक भगवान् अपने पिता के राज्य को एक पथिक की तरह ही छोड़ते हुए वन गमन कर जाते हैं।– **'राजीव लोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं ।'**

हे गुरोः ! हम सब भी पथिक ही हैं, आपके बतलाये पथ पर चलते चले जा रहे हैं, अब आपसे ही प्रार्थना है कि कहीं हम भटक न जायें । आप ही सम्हाले रहिये नाथ ! बस यही प्रार्थना है । अरदास है श्री चरणों में । गुरु बिनु कौन बतावे बाट । आप समर्थ हैं बस बाँह पकरि गहि लीजै।'

✦✦✦

प्रेरक पत्र

प्रिय भाई

मथुरा
17-05-96

पत्र मिला। मेरे विचार से गुरु महाराज की तुम्हारे ऊपर कृपा है जो टिकट नहीं मिला। राजनीति तथा अध्यात्म दो अलग-अलग रास्ते हैं एक ऊपर ले जाता है दूसरा नीचे की ओर । गुरु का हाथ तुम्हारे ऊपर है।

आपका

हस्ताक्षर (युग पुरुष प. पू. हेमेन्द्र कुमार जी)

गुरु जैसा बनाती है साधना

श्रीयुत् अमित कुमार

परम पूजनीया बड़ी बुआजी यकायक हमारी आँखों से ओझल हो गईं । साकार और सगुण परमात्मा की अपनी अलग महिमा है । निर्गुण, निराकार परमात्मा को जानना बड़ा ही असम्भव है इसीलिए परमात्मा का समय-समय पर समर्थ गुरु के रूप में धरा धाम पर प्रादुर्भाव होता है । गुरुमहाराज और उनके आध्यात्मिक परिवार के रूप में परमात्मा का साक्षात सानिध्य सभी को मिला है । यह परमात्मा की जीवमात्र पर अहैतुकी कृपा है कि वह परमसंतों के रूप में अपना सानिध्य प्रदान करता है ।

भगवान श्रीकृष्ण गीता में अर्जुन को इसी आशय का उपदेश देते हैं कि तुम्हें कुछ करना नहीं है । तू बस मेरे मन वाला हो जा, लेकिन क्या यह सरल है ? अलौकिक दर्शन, ऐसा आकर्षण, वो रूप माधुर्य, जो जीव के मन को हर ले, कितना दुर्लभ है । जैसे पाँच हजार साल में श्रीकृष्ण आए, ऐसे ही यह गुरुपरिवार हजार वर्ष में एक ही आया । इस परिवार का सानिध्य प्राप्त हो गया, उस अद्‌भुत आकर्षण और प्रेम के चंद छींटे हमारे मन पर पड़े, यही असीम सौभाग्य है । उसी का प्रताप है कि यह सत्संग धारा अविरल प्रवाहित हो रही है और लाखों नर-नारी इस पावन धारा में प्रेम प्लावित होते जा रहे हैं ।

गुरु के रूप की ओट लिए सगुण परमात्मा के लीला सहित होने से, प्रकृति के आवरणों के झीने पर्दे में होने से, उस परम प्रकाशमयी, तेजोमयी, ज्ञानरूप परमात्मा को जानना-समझना जीव के लिए संभव हो गया है । जीव परमात्मा का सदगुरु के रूप में दर्शन कर कृतकृत्य हो गया । परम पावन के स्पर्श मात्र से भवबंधनों में शिथिलता और वह गुरु की आत्मा से प्रेम पयोधि पान कर मुक्तिपथ की ओर खिंचा चला गया ।

भागवत का सृजन यह बताने के लिए हुआ कि भगवान श्रीकृष्ण जगतगुरु थे । हालांकि, हम अर्जुन को ही देखें तो वह योगीश्वर श्रीकृष्ण को आजन्म सखा एवं संबंधी ही समझता रहा । उसे यह समझ में नहीं आया कि श्रीकृष्ण तो परमात्मा हैं, जिनका मैं सानिध्य कर रहा हूँ । किन्तु जैसे ही श्रीकृष्ण ने द्वारिका में शरीर त्यागा कि इधर हस्तिनापुर में अर्जुन को दारुण दुःख हुआ, वह भाव-विह्वल हो उठा । सारे पर्दे हट गए और बिछोह असहनीय हो गया । यही सगुण परमात्मा की पहचान है । शरीर में रहने तक दिव्य दृष्टि प्राप्त नहीं होती कि उन्हें परमात्मा के रूप में देख सकें ।

गीता का अर्थभाव भी इसी ओर संकेत करता है कि सगुण परमात्मा का सानिध्य ही सबसे अमूल्य निधि है । यदि ऐसा अवसर सगुण परमात्मा ने दिया है तो वास्तव में यही अहेतुकी कृपा है । यह स्थूल परमात्मा के सानिध्य का प्रताप है कि जीव को शिष्य रूप में स्वीकार

किया और इसका परिणाम यह कि अध्यात्म के सारे स्वरूप का रसपान सहज ही जीव को प्राप्त हो गया । ऐसा अलौकिक दर्शन वर्णनातीत है, क्योंकि शब्दों की सीमाएं हैं और प्रेमाकर्षण के दौरान सांसारिक ज्ञान कहां । सद्‌गुरु के सान्निध्य का समय ही अमूल्य होता है और कालांतर में स्मृति शेष ही हृदयपटल पर बचती है ।

ऐसे ही सद्‌गुरु भगवान गुरुमहाराज ने ब्रह्म के साकार, निराकार और उससे भी परे का ज्ञान कराने की व्यावहारिक साधना हमें दी । गुरुमहाराज ने सत्संग रूपी बगिया इसलिए लगाई, यह मिशन शुरू किया ताकि जो वस्तु उनके पास थी वह जीवमात्र तक पहुंच सके । इस कार्य के लिए उन्होंने हमें एक आंतरिक ध्यान की साधना दी । जिसके सहारे हम उन जैसे हो सकें । उनके समस्त गुणों को अपने अंदर धारण कर सकें । अपना रूपांतरण कर सकें ।

परमसंत छोटे भैया का जयपुर भंडारे सन् 2000 का प्रवचन है कि जब हम प्रकृति में रहते हुए उसे परमपिता परमेश्वर यानी ब्रह्म को समझने की कोशिश करते हैं तो हम देखते हैं कि वह ब्रह्म जो कण-कण में व्याप्त है, वह केवल निर्गुण हो सकता है । लेकिन जीव के लिए निर्गुण ब्रह्म को पकड़ना असंभव है । इसीलिए उसे दूसरा विपरीत गुण दिखलाई देता है वह है सगुण । इसी सगुण रूप के आगे वह और गुण देखता है साकार-निराकार, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष । इस तरह से जब भी हम प्रकृति में कहीं भी देखते हैं तो विपरीत व्यवहार दिखाई देता है ।

अब हम गुरुमहाराज की इस साधना पर आएं। किसी नए साधक को ध्यान की क्रिया बतलाई जाती है तो कहते हैं कि गुरु पहले दिन नहीं बनता, इसलिए तुम अपना जो सबसे प्रिय इष्ट हो उसको साकार अपने सामने बैठाओ । और चूंकि हमको उस स्थिति में जाना है जहाँ ईश्वर यानी ब्रह्म, न साकार है, न निराकार है इसलिए उस साकार रूप को निराकार रूप से भर लो और अपने गुरु या इष्ट को सामने बैठाकर ब्रह्म के निराकार रूप-प्रकाश से ओतप्रोत कर लो । फिर उस प्रकाश को अपने हृदय के अंदर ले जाओ और वहीं ध्यान लगाओ । बाहर के साकार रूप को छोड़ दो । धीरे-धीरे जब इस निराकार रूप पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं तो एक समय आता है जब हम अपना खयाल भी भूल जाते हैं। इस समय हमारे सामने केवल प्रकाश रहता है और हम एक आनन्द की अनुभूति करते हैं, क्योंकि यहाँ पर हमको प्रत्यक्ष ब्रह्म के दर्शन हो रहे हैं, हम ऐसा समझते हैं । लेकिन आगे जाकर हम इसके परे जाते हैं । साकार और निराकार दोनों से अलग एक दूसरी स्थिति आती है, जब यह प्रकाश भी हमारे सामने से हट जाता है । उस समय हमारे सामने ब्रह्म का अप्रत्यक्ष रूप होता है । यह अप्रत्यक्ष रूप वर्णन करने लायक नहीं है । कोई कहता है यह गुरु का प्रकाश है, कोई कहता है यह उसकी शक्ति है, कोई कहता है उसका ज्ञान है, कोई कहता है उसकी कृपा है । लेकिन यह शक्ति अब हमारे अंदर वह कार्य करती है, जिसे कहते हैं अपने जैसा बनाना ।

नवनीत हृदय परमसंत श्री डॉ. ब्रजेन्द्र कुमार जी ने कहा था कि संतों के दरबार में केवल संतों की बात न की जाए वरन् उनके गुणों को धारण कर जीवन में ढाला जाए । उनका कहना था कि ऋषियों के देश में केवल ऋषियों की बात न की जाए, ऋषि बना जाए । गुरुमहाराज ने इस मिशन की स्थापना इसी उद्‌देश्य से की थी कि सब मेरे जैसे हो जाएं । ✦✦✦

गुरु–कृपा–का–ले पाथेय ...

— डा. माधुरी नाथ

आशा आकांक्षाएँ मन की
इच्छा कामनाएँ सारी
तुम्हें समर्पित करती हूँ प्रभो।
चाहतें, सारी की सारी ।

एक लक्ष्य हो, एक ध्येय हो
एक पंथ हो, एक दिशा
तुम्हीं केन्द्र बिन्दु बन सबके
मध्य रहो हे परम पिता ।

मन में, आँखों में बस जाओ
कानों में बनकर हरिनाम
जिह्वा मेरी जपे निरंतर
रोम-रोम भी राधे-श्याम ।

आसक्ति बन जाए विरक्ति
राग बने वैराग्य
निष्काम कर्म करूँ मैं सारे
फल की इच्छा त्याग ।

भव-बन्धन से मुक्त करो अब
मोह-माया के टूटें जाल ।
गुरु-कृपा का ले पाथेय
अपना लूँ प्रेम-पंथ विशाल।

✦✦✦

श्रद्धांजलि

अत्यन्त दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि परम पूज्या श्रीमती मृदुला कुलश्रेष्ठ (छोटी भाभी जी) दिनांक 11 नवम्बर 2014 को प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में 3 बजे अपने नश्वर शरीर को त्यागकर गुरुधाम चली गईं।

आप समर्थ गुरु परमसंत डा. चतुर्भुज सहाय जी की सबसे छोटी पुत्रवधू थी। आपके तीन पुत्र हैं जिनको आपने अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाई । आपके ज्येष्ठ पुत्र अमेरिका में एवं दो पुत्र यहाँ पर अपने दैनिक कार्यों के साथ-साथ सत्संग के मिशन के प्रचार-प्रसार में सहयोग कर रहे हैं।

आप स्नेह, वात्सल्य एवं अध्यात्म से परिपूर्ण थीं। परमपूज्य छोटे भईया के पर्दा करने के बाद आपने सत्संगी भाई बहिनों को मातृवत स्नेह देकर परमपूज्य की कमी महसूस नहीं होने दी।

आपको सत्संगी भाई बहनों से इतना लगाव था कि जो भी आपके दर्शन के लिए आता था आप बड़े प्रेम से उनका हाल चाल पूछतीं उनके खाने, रहने का पूरा प्रबन्ध करतीं और उनकी समस्याओं का समाधन करने का प्रयास करती थीं। प्रत्येक सत्संगी भाई-बहिन आपके दर्शन करके पूर्ण संतुष्ट होकर घर जाता था। जिसे भी आपके संसर्ग और सत्संग का परम सौभाग्य मिला वह आत्म विभोर हो उठा । आपको ज्यादातर सत्संगी भाई बहन आदर से मम्मी कहकर पुकारते थे।

हे परम पूज्या माँ आपके श्री चरणों में प्रार्थना है आपकी कृपा दृष्टि हम सब पर बनी रहे।

रामाश्रम सत्संग,

मथुरा परिवार

अमृत वचन

- यदि तू ईश्वर को स्नान कराना चाहता है तो अपाहिजों को स्नान करा। यदि ईश्वर को भोग लगाना चाहता है तो भूखे और दीनों को भोजन करा । यदि उनके दर्शन करना चाहता है तो अपने गुरु के दर्शन कर और उन्हीं को प्रणाम कर, क्योंकि ईश्वर इसी जिह्वा से तुम्हें उपदेश दे सकता है ।
- अपवित्र रहने से दैवी शक्तियाँ मनुष्य का साथ छोड़ देती हैं ।

— परम भागवत परम संत पं. मिहीलाल जी

'प्रार्थना–परमात्मा से जुड़ने की'

— डॉ. जगदीश गाँधी

शरीर रूपी यंत्र के माध्यम से हमें ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन करना चाहिए :–

प्रभु मनुष्य से कहते हैं कि– "तू करता वही है जो तू चाहता है, पर होता वही है जो मैं चाहता हूँ । तू कर वही जो मैं चाहता हूँ फिर होगा वही जो तू चाहता है ।" इसलिए परमात्मा द्वारा दिये गये शरीर रूपी यंत्र के माध्यम से हमें ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। परमात्मा कहते हैं कि तुम्हें जो आँखें दी हैं, वे सुन्दर ईश्वरीय रचना देखने के लिए दी हैं । इसलिए व्यर्थ की चीजें हम अपनी इन आँखों से न देखें । किसी भी चीज को देखते हुए हमारा भाव ईश्वरीय होना चाहिए। ईश्वर कहता है कि तेरी आँखें मेरा भरोसा है । तू इसको व्यर्थ की इच्छाओं की धूल से गंदा न कर। तेरे कान मेरी पवित्र वाणी को सुनने के लिए हैं । तेरा हृदय मेरे गुणों का खजाना है । तेरे स्वार्थ रूपी हाथ कहीं मेरे खजाने को लूट न लें। तुझे हाथ इसलिए दिये हैं कि इन हाथों में ईश्वर द्वारा दिव्य लोक से भेजी गई पवित्र पुस्तकें गीता, त्रिपटक, बाईबिल, कुरान, गुरुग्रंथ साहिब व किताबे अकदस आदि हों तथा तू अपने हाथों से वही कार्य कर जो ईश्वरीय आज्ञाओं तथा इच्छाओं के अनुकूल हों । इसलिए हमारी अपनी कोई इच्छा नहीं होनी चाहिए बल्कि हमें प्रभु इच्छा को ही अपनी इच्छा मानते हुए अपने शरीर रूपी यंत्र के माध्यम से प्रभु की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए । जो लोग प्रभु की इच्छा तथा आज्ञा को पहचान लेते हैं फिर उन्हें धरती तथा आकाश की कोई शक्ति प्रभु का कार्य करने से रोक नहीं सकती ।

'प्रार्थना' परमपिता परमात्मा से जुड़ने का सबसे सशक्त माध्यम है:-

इस सृष्टि को सुन्दर बनाने के लिए हमें इस शरीर रूपी यंत्र का सदुपयोग करना चाहिए । इसके लिए हमारा मन तथा हृदय ईश्वरीय इच्छाओं से लबालब होना चाहिए । प्रार्थना परमपिता परमात्मा से जुड़ने का सबसे सशक्त माध्यम है । प्रभु वार्तालाप के माध्यम से हमारी आत्मा में प्रकाश आता है । ईश्वरीय प्रकाश से आत्मा के प्रकाशित होने से मनुष्य का सारा जीवन प्रकाशित हो जाता है । प्रार्थना का संबंध जीवन से अवश्य होना चाहिए । हमें प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए कि हे प्रभु आप मेरी सहायता करें । मेरी इच्छा तेरी इच्छा के अनुकूल हो । हमें प्रार्थना के माध्यम से अपनी इच्छाओं को ईश्वर की इच्छाओं से जोड़ना चाहिए। हमें परमात्मा से प्रार्थना करनी

चाहिए कि हे परमात्मा! हम आपकी सेवा करेंगे। ईश्वर की सृष्टि को सुन्दर बनाने के लिए अपने ज्ञान का उपयोग करेंगे तो ईश्वर हमारी सहायता तथा मार्गदर्शन करेगा। ईश्वर हमारी सहायता के लिए आयेगा। ईश्वर की तरफ से देवदूतों की एक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी और इसी प्रकार तमाम सेनायें हमारी सहायता के लिये आ जायेंगी।

ईश्वर की सहायता से ही सभी समस्याओं पर विजय संभव :-

परमात्मा जिस समय हमारी सहायता करता है उस समय हमारे मस्तिष्क में जो विचार आते हैं वे विचार हमारे अच्छे के लिए ही होते हैं। वे विचार हमारी भलाई के लिए होते हैं। हम उस समय कितनी भी बड़ी कठिनाई में क्यों न हों परमात्मा हमें सही मार्गदर्शन देकर उन समस्याओं पर हमको विजय दिला देते हैं। उस समय हमारे मस्तिष्क में ऐसे-ऐसे विचार आने लगते हैं, उन समस्याओं के समाधान के लिए ऐसे-ऐसे सुझाव आने लगते हैं, जिनके बारे में हमने पहले कभी सोचा तक नहीं होता है। ईश्वर जब हमारी सहायता के लिए आता है तो हमारे सोचने और समझने की शक्ति में गजब का इजाफा हो जाता है। हमारे अंदर से सही काम को करने की शक्ति पैदा हो जाती है। हमारे विचारों में परमात्मा का ज्ञान प्रवाहित होता चला जाता है। यह दिव्य ज्ञान परमात्मा हमें दिव्य लोक से विचारों के माध्यम से भेजते रहते हैं।

ईश्वर की भक्ति के बाद हम मानसिक रूप से बहुत अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं:-

ईश्वर, अल्लाह, खुदा, गॉड या परमात्मा, जिस भी रूप में हम उसे मानते हैं, उसकी शरण में चले जाने के बाद हमारी आत्मा में इतना बल आ जाता है कि हमारा मन स्थिर हो जाता है और हम बहुत तीव्रता के साथ उन समस्याओं के समाधान के लिए सही दिशा में सोचते चले जाते हैं। उस समय हमारे द्वारा जो भी निर्णय लिया जाता है वह एकदम सही और हमारे हित के लिए होता है। ईश्वर की भक्ति के बाद हम मानसिक रूप से बहुत अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। हमारे द्वारा की गई प्रार्थना के बाद परमपिता परमात्मा हमारे मस्तिष्क में विचारों के माध्यम से जो ज्ञान देता है उन्हीं ज्ञान पर चलकर ही हम अपने जीवन में बड़े से बड़े लक्ष्य को प्राप्त करते जाते हैं। इसलिए हमें मन ही मन में परमात्मा को याद करना चाहिए। उनकी प्रार्थना, उनका मनन तथा उनका चिंतन करना चाहिए और अपने लिए मार्गदर्शन मांगना चाहिए। प्रार्थना के माध्यम से हमें परमात्मा से जुड़ना चाहिए। फिर परमात्मा हमें अपना जो मार्गदर्शन दें उस पर चलते हुए हमें सारी मानवता की भलाई के लिए काम करना चाहिए। ऐसा करने से परमात्मा हमसे खुश होंगे और हम उसकी सहायता से अपने जीवन में नित्य नई-नई बुलंदियों को छूते चले जायेंगे।

✦✦✦

परम संत समर्थ पुरुष बड़े भैया की बात

श्री ललित कुमार

भगवान से यह प्रार्थना मत करो कि हमारे कष्ट दूर कर दो बल्कि यह कहो कि-प्रभु जो भी आप हमारे लिए ठीक समझें वह करें । हमें तो इन कष्टों को सहन करने की शक्ति दें ।

गुरु कृपा की महत्ता सभी मतों में है पर संत-मत में इसका महत्व ईश्वर-कृपा से भी अधिक माना गया है । कृपा एक ऐसी कामधेनु है जो सभी सांसारिक व परमार्थिक कामनाओं की पूर्ति करती है, पर बिडम्बना यह है कि गुरु-कृपा होने पर साधक की कामनाओं का नाश हो जाता है ।

आत्मा का ज्ञान पुस्तकें पढ़ने अथवा बातचीत करने से नहीं होता, कर्म में लगे रहने से भी नहीं मिलता। वह मिलता है गुरु के आशीर्वाद से । इस आशीर्वाद को प्राप्त करने के लिए दो काम करने होते हैं- (1) गुरु की आज्ञा का पालन करना (2) सेवा ।

मनुष्य योनि हमको इसलिए मिली है कि यह कर्मयोनि है । यहाँ हम ऐसे कर्म करें कि जिससे हम ऊपर को उठें और भगवान की ओर चलें । बस, भगवान की ओर चलने के लिए ही 'आन्तरिक साधना' की आवश्यकता पड़ती है जो हमारे यहाँ की मुख्य चीज है । इसे कुछ दिन करके देखना चाहिए। यदि इसे न किया तो समझना चाहिए कि भगवान की ओर चले ही नहीं ।

ब्रह्मविद्या क्रय की वस्तु नहीं जो शिष्य किसी गुरु से खरीद ले और थोड़े ही दिनों में शिष्य से गुरु बन जाय और स्वयं भी ब्रह्मविद्या देने का व्यवसाय करने लगे । इसके लिए तो ऐसे गुरु की तलाश करनी होती है जो सर्व समर्थ हो तथा ब्रह्मज्ञान देने की योग्यता रखता हो ।

जीवन में सच्ची सरलता बातों से नहीं आती, बनावट से नहीं आती, पैसों से नहीं मिलती विरासत से भी नहीं मिलती । इसे पाने के लिए अपना अहंकार व दंभ समाप्त करना होता है । जब साधक साधना करते-करते गुरु के असली रूप व शक्ति को देखता है तो अपने को बहुत हीन व अल्पज्ञ पाता है । उसी समय वह गुरु की शरणागत होता है और अपना आपा मिटा गुरु चरणों के सहारे अपनी जीवन नैया छोड़ देता है । ऐसों पर गुरु को दया आती है और वह शिष्य के अहंकार के झीने पर्दे को फाड़कर फेंक देता है तब सरलता उसके जीवन का अंग बन जाती है।

वास्तव में गुरु कृपा के सागर होते हैं पर उस

सिन्धु से एक बूंद भी प्राप्त करना मुश्किल कार्य है। वह सहज ही में मिलने वाली वस्तु नहीं है । जो साधक यह समझते हैं कि बारबार दंडवत करने, चिकनी चुपड़ी बातें करने, सांसारिक पदार्थों की भेंट करने या मौखिक समर्पण से गुरु कृपा प्राप्त कर लेंगे तो वे मुगालते (भ्रम) में हैं । गुरु व गुरुकृपा के राज से विल्कुल अनभिज्ञ हैं ।

दुर्ग में रहने का अर्थ है—सुरक्षित बने रहना । इसी प्रकार यह सत्संग रूपी दुर्ग है जिसमें आ जाने पर मनुष्य सुरक्षित बना रह सकता है । परन्तु यह भी सत्य है कि गुरु की आज्ञा और आदेशों का पालन न करने तथा अनुशासन में न रहने से यह दुर्ग रक्षा नहीं कर पायेगा । अपने परिश्रम की कमाई व गुरु आज्ञा पालन पहली शर्त है । शुद्ध कमाई से जीवन में परेशानियाँ तो बनी रहेंगी परन्तु उस नियम पर आरुढ़ रहने से दुनियावी काम भी नहीं रुकेगा और अन्तर की शान्ति भी बनी रहेगी । अपने मन की करते रहने से गुरु राजी नहीं होता—यह बात साधकों को भली प्रकार समझ लेने की है । ✦✦✦

रामाश्रम सत्संग, मथुरा के उपकेन्द्रों का सत्संग कार्यक्रम/भण्डारा

सूरत (गुजरात)

दिनांक : 4 (सायं से), 5 एवं 6 जनवरी 2015
सत्संग स्थल : अग्रवाल समाज भवन, घुड़दौड़ रोड
सम्पर्क सूत्र : श्री श्याम जी बेड़िया मो. 09374808897
: फोन नं. 0261-2320098

वाराणसी

दिनांक : 12, 13 एवं 14 मार्च 2015
सत्संग स्थल : तुलसी उद्यान, पेट्रोल पम्प के सामने महमूरगंज वाराणसी
सम्पर्क सूत्र : श्री हरिवंश सिंह मो. 09415813565
: फोन नं. : 08052711640

इटावा

दिनांक : 17 (सायं से), 18 एवं 19 मार्च 2015
सत्संग स्थल : नारायण धाम, पुलिस चौकी रेलवे रोड के सामने
सम्पर्क सूत्र : श्री रमेश चन्द्र गुप्त मो. 9412880981

मथुरा भण्डारा, मथुरा केन्द्र

15, 16 एवं 17 फरवरी 2015

रामाश्रम सत्संग, मथुरा का वार्षिक भंडारा दिनांक 15, 16 एवं 17 फरवरी 2015 शिवरात्रि पर (साधन प्रेस के समीप) डैम्पियर नगर, मथुरा में निश्चित हुआ है। प्रेमीजन पधार कर आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करेंगे ऐसी आशा है। साथ ही निवेदन है कि अपने निकट के भाईयों को भी सूचित कर दें। कृपया निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान दें :-

1. यह केन्द्र (श्री गुरुमहाराज के स्थान पर) का आध्यात्मिक उत्सव (भण्डारा) आपका है। इसी भावना को लेकर कृपया आएँ। इस तरह छोटे-मोटे कष्टों का आभास भी आपको नहीं होगा और सेवा की प्रवृत्ति भी अन्तर में पैदा होगी।

2. जहाँ तक सम्भव हो ऐसे साथियों को जिनको सत्संग तथा गुरु महाराज की शैली में कोई रुचि न हो एवं अधिक वृद्ध, बीमार, छोटे बच्चे वाली माताओं को न लायें। उनको भी कष्ट होगा और ध्यान के समय, आवास तथा खाने के समय अन्य को भी असुविधा होना स्वाभाविक है।

3. गतवर्षों की भाँति इस वर्ष भी भइयों के आवास एवं भोजन का प्रबन्ध सत्संग की ओर से रहेगा। परन्तु संख्या अधिक बढ़ जाने के कारण प्रबन्धक आये हुये भाई-बहिनों का उनकी इच्छानुसार प्रबन्ध नहीं कर पाते। अत: निवेदन है कि जो आने वाले भाई अपना ठहरने या भोजन का प्रबन्ध स्वयं करना चाहें तो वे ऐसा करने के लिये स्वतंत्र हैं। हमारी इच्छा तो यही है कि किसी को कोई असुविधा न हो।

4. ठहरने का स्थान गतवर्ष की भाँति अग्रवाल धर्मशाला, बंगाली घाट और आर्य समाज रोड पर सभी धर्मशालाएँ उपलब्ध हैं। जो जहाँ ठहरते हों वे सीधे जाकर स्थान ले लें तत्पश्चात् प्रबन्धक से आज्ञा-पत्र लेकर वहाँ पर दे दें।

5. सबको चाहिये कि सेवा भाव से आएँ। **विशेष तौर से शिक्षक तथा उपदेशकों से निवेदन है कि वे सभी भइयों की सुविधा का ध्यान रखें तथा अलग-अलग पूरे पण्डाल में बैठें जैसा कि श्री गुरु महाराज के समय में होता था।** उनकी मौजूदगी से आस-पास बैठे हुये नये-पुराने भाई गुरु-कृपा को अधिक अनुभव करेंगे।

6. ध्यान करते समय वोलेन्टियर्स आँख खोलकर सब पर निगरानी रखें कि किसी को कष्ट तो नहीं हो रहा और उसका समाधान करें। प्रबन्धकों, कार्य कर्त्ताओं, स्वयंसेवकों तथा भण्डारे में आये हुये भाई-बहिनों से निवेदन है कि सेवा से वातावरण प्रेममय हो जाता है साथ ही पास बैठने वालों को आराम मिल सकता है। इन बातों का ध्यान रखें।

7. खाने के समय पहले माताओं-बहिनों, बच्चों तथा वृद्धों को खाने का अवसर दें और तत्पश्चात् सुविधा जनक तरीके से आप स्वयं भोजन करें।

8. अपने रुपये और सामान की सुरक्षा का पूरा ध्यान रखें। कोई भी सज्जन कीमती सामान आभूषण तथा आवश्यकता से अधिक धनराशि साथ न लायें। ठहरने के स्थान पर बतौर बारी-बारी से एक या दो जाने पहिचाने

भाई को सामान की निगरानी के लिये नियत कर दें। वे वहीं बैठकर ध्यान व चिन्तन कर सकते हैं। पण्डाल में ध्यान करते समय कुछ भाई आँख खोलकर बारी-बारी से देखते रहें कि कोई गलत आदमी या औरत कुचेष्टा तो नहीं कर रहा है। साथ में लाये हुये बच्चों का पूरा ध्यान रखें। आपकी जरा सी सावधानी आगे होने वाली हानि को समाप्त कर देगी जिसका लाभ सभी को होगा।

9. एक विशेष प्रार्थना है कि पण्डाल ध्यान करने व प्रवचन सुनने के उद्देश्य से बनाया जाता है। इसलिये उसमें ठहरने के बजाय दूसरे स्थानों में ठहरें तो बहुत से आये हुये भाई उस स्थान पर बैठ सकेंगे और उन पर आपका विशेष उपकार होगा। पण्डाल में रहना निषिद्ध है। अतः पुराने साधकों से विशेष रूप से अनुरोध है कि वे पण्डाल में ठहरने की जिद न करें।

10. एक विशेष निवेदन है कि गुरुजनों के दिन में एक ही बार चरण स्पर्श करें। शेष जब इच्छा हो तो उनको मानसिक प्रणाम कर सकते हैं इस तरह उनको कुछ आराम मिल जायेगा। जिसका हमें ध्यान देना चाहिये।

11. निवेदन यह भी है कि अन्तिम दिन प्रसाद अर्पण करने के पश्चात् चरण स्पर्श क्रम बद्ध होकर करें यह सुविधाजनक भी होगा और समय की बचत भी होगी। एक लाभ यह भी होगा कि कोई बाहरी तत्व सक्रिय नहीं हो पायेगा।

12. जो स्वेच्छा से भण्डारा सहयोग राशि देना चाहते हैं, भण्डारा फण्ड कार्यालय में ही जमा करें तथा रसीद प्राप्त कर लें।

13. भण्डारा समाप्ति के बाद धर्मशाला व ठहरने के स्थान खाली कर दें, यदि रुकने का विचार हो तो भण्डारा व्यवस्थापक से अनुमति लेकर जहाँ वो कहें रुकें या स्वयं अपनी व्यवस्था करें। भण्डारे के दौरान सत्संग की ओर से रखे गये होटल अथवा धर्मशाला में यदि किराये का भुगतान करते हैं तो रसीद भण्डारा फण्ड कार्यालय में श्री महेश चन्द्र जी के पास जमा कर दें।

- व्यवस्थापक

निवेदन

मथुरा भण्डारा (दिनांक 15, 16 एवं 17 फरवरी 2015) से सम्बन्धित जानकारी के लिए नीचे मोबाइल नम्बर दिये जा रहे हैं, सभी सत्संगी भाइयों से निवेदन है कि आपको जिस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी हो उसी से सम्बन्धित मोबाइल नं. पर सम्पर्क करें।

1. जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट से सम्बन्धित जानकारी के लिए मोबाइल नं. 08791487080
2. होटल से सम्बन्धित जानकारी के लिए मोबाइल नं. 9319345000
3. धर्मशालाओं में ठहरने के लिए जानकारी हेतु,
   मोबाइल नं 09828284545, 09654050210
4. साधन हिन्दी मन्थली एवं साधन प्रकाशन से सम्बन्धित जानकारी के लिए
   मोबाइल नं. 9319680800 फोन नं. 0565-3290790

जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट

ट्रस्ट के लक्ष्य एवं उद्‌देश्य-

ट्रस्ट का उद्देश्य है कि रामाश्रम सत्संग (मथुरा) के उन भाईयों को आर्थिक सहायता प्रदान की जा सके जो आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त दयनीय स्थिति में पड़े हैं। उद्‌देश्य की पूर्ति के लिये ट्रस्ट निर्धन विधवाओं को भी आर्थिक सहायता प्रदान करेगा। गम्भीर रूप से बीमार व्यक्तियों को चिकित्सा सम्बन्धी सहायता भी प्रदान की जायेगी।

जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट में जो सज्जन डोनेशन देना चाहें वे ट्रस्ट के नाम ड्राफ्ट/मल्टीसिटी चैक द्वारा (कम से कम पाँच सौ रुपये) दे सकते हैं। कृपया धनराशि नकद अथवा मनी-आर्डर द्वारा भेजने का कष्ट न करें। मल्टीसिटी चैक/ड्राफ्ट के पीछे अपना पता (पोस्टल पता एवं मोबाइल नम्बर) अवश्य लिखने की कृपा करें।

छात्र वृत्तियाँ इस प्रकार हैं

धनराशि उपलब्ध होने की दशा में निम्नलिखित मासिक छात्र वृत्तियाँ योग्य विद्यार्थियों को ट्रस्ट प्रदान करेगा-

1. समर्थ गुरु परमसंत डॉक्टर चतुर्भुज सहाय जी छात्रवृत्ति।
2. ब्रह्मलीन परमसन्त श्री मनमोहन लाल जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
3. ब्रह्मलीन परमसन्त पं. मिहीलाल जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
4. ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. बृजेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
5. ब्रह्मलीन परमसंत श्री हेमेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
6. ब्रह्मलीन परसंत डॉ. नरेन्द्र कुमार जी मेमोरियल छात्रवृत्ति।
7. परमपूज्या श्रीमती विनोद कुमारी जी (पूज्या बड़ी भाभी माँ) मेमोरियल स्कॉलरशिप (गर्ल्स-छात्रवृत्ति)।
8. अवर छात्र वृत्तियाँ (जूनियर स्कॉलरशिप)।

सभी छात्रवृत्तियों का शिक्षा सत्र प्रति वर्ष दस मास का होगा। छात्रवृत्ति प्राप्तकर्ता आगामी वर्ष के लिये अन्य अभ्यार्थियों के साथ पुनर्विचारित होगा यदि उसने कम से कम 60 प्रतिशत अंक परीक्षा से प्राप्त किये हों।

अत: जो भाई आर्थिक दृष्टि से दयनीय हैं या निर्धन मेधाबी छात्र जो योग, दर्शन शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, इन्जीनियरिंग, मेडिकल के छात्र हैं या उस पर शोध कर रहे हैं अथवा इण्टरमीडिएट तक के छात्र हैं, उन छात्रों को ट्रस्ट छात्रवृत्ति प्रदान करता है।

इस सन्दर्भ में ट्रस्ट की आगामी बैठक मथुरा भण्डारा के अवसर पर 16फरवरी 2015 को होगी। पूर्ण आवेदन फार्म निम्न पते पर 10 फरवरी 2015 तक अवश्य जमा करवाने की कृपा करें। आवेदन फार्म में अपना मो. नं. /फोन नं. अवश्य लिखें जिससे आवश्यक हो तो सम्पर्क किया जा सके।

आलोक कुमार
सचिव
जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट 'साधन प्रकाशन'
डैम्पियर नगर, मथुरा - 281001

नोट - जिया माँ मेमोरियल ट्रस्ट के विषय में जानकारी के लिए मो. नं. 08791487080 पर सम्पर्क करें।

समाचार इधर–उधर के :–

तुलसी कितनी उपयोगी

तुलसी का आम भारतीय जन–जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। किन्तु इसे खुले में रखना ही श्रेयस्कर रहता है। यानी इसे बन्द कमरे में अन्य सजावटी पौधों की तरह स्थान नहीं दिया जा सकता। तुलसी सर्वगुण सम्पन्न होते हुए भी घर–गृहस्थी में शामिल नहीं की जाती, बल्कि आंगन तक ही सीमित रहती है। हमारे यहाँ तुलसी की पूजन की भी प्रथा है। तुलसी में अनेक औषधीय गुण भी हैं, जो निम्नवत हैं–

1. रोज सुबह खाली पेट डेढ़ चम्मच तुलसी का रस या दस तुलसी की पत्तियाँ चबाने से रक्त शुद्ध होता है, गले और पेट के दर्द से मुक्ति होती है, सीने में होने वाले संक्रमण रुक जाते हैं।

2. बराबर मात्रा में अदरक और तुलसी का रस शहद में मिलाकर रोज सेवन करने से गठिया, साइटिका के दर्द समाप्त होते हैं और गैस की समस्या से भी छुटकारा मिल जाता है।

3. अधेड़ उम्र के लोगों की नेत्र ज्योति प्राय: कमजोर हो जाती है, यदि वे दो बूंद तुलसी का रस आँखों में डालते हैं तो बहुत लाभ होगा।

4. स्त्रियाँ यदि सुबह तुलसी की दस पत्तियाँ एक ग्लास पानी के साथ लें, तो मासिक धर्म के समय होने वाली मरोड़ से छुटकारा मिल जायेगा। यदि यह ऐंठन बहुत ज्यादा हो तो 30 मिली. तुलसी का रस 41 दिन तक लगातार लेने से वह रोग हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है।

5. चर्मरोग पर तुलसी की ताजी पत्तियों के रस में नीबू रस बराबर मात्रा में मिलाकर लगायें, इससे सभी प्रकार के चर्मरोग ठीक हो जाते हैं ।

6. सर्दी, जुकाम, खांसी होने पर तुलसी की ताजी पत्तियाँ एवं अदरक के रस को शहद के साथ मिलाकर सेवन करें तो लाभ मिलेगा।

7. तुलसी की ताजी पत्तियों को धीरे–धीरे चबाने से दांत दर्द में राहत मिलती है ।

8. तुलसी की ताजी पत्तियों के रस को गुनगुना गरम कर कान में डालें, कान का दर्द तुरन्त मिट जाता है।

9. तनावग्रस्त व्यक्तियों को चाहिए कि वह सुबह–शाम तुलसी की ताजी पत्तियों को चबायें, जिससे राहत मिलती है।

10. तुलसी की ताजी पत्तियों के रस को कपूर एवं शहद के साथ मिलाकर सेवन करने से कफ की बीमारी कुछ ही दिनों में ठीक हो जाती है ।

11. तुलसी के पत्तियों के चूर्ण को मिश्री के साथ सेवन करने से उल्टी का आना बन्द हो जाता है ।

12. मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों को चाहिए कि वे खाली पेट नियमित तीन सप्ताह तक तुलसी की पाँच ताजी पत्तियाँ पाँच काली मिर्च के साथ सेवन करें।

दिवंगत आत्माओं के लिए प्रार्थना

परम पूज्य श्री गुरु महाराज से प्रार्थना है कि अक्टूबर 2014 माह के दौरान रामाश्रम सत्संग (मथुरा) से सम्बन्धित सभी दिवंगत आत्माओं को निजधाम में स्थान दें एवम् शोक संतप्त परिवारीजनों को धैर्य धारण करने की शक्ति प्रदान करें ।

वर्ष : 82 [दिसम्बर-2014] अंक : 05

राजस्थान तथा बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत

※ साधन के नियम ※

1. गूढ़ तथा अनुभवी गुप्त रहस्यों को सरल भाषा द्वारा जनता तक पहुँचाना तथा सदाचार की शिक्षा देना "साधन" का मुख्य उद्देश्य है।
2. साधन प्रत्येक मास की 20-21 तारीख को प्रकाशित होता है। जिन ग्राहकों को पत्रिका अगले माह की 15 तारीख तक न मिले, उन्हें डाकखाने तथा कार्यालय से सम्पर्क करना उचित है। अंक न मिलने पर एक माह के अन्दर सूचित करने पर अंक दोबारा भेज दिया जायेगा।
3. साधन में आध्यात्मिक, सामाजिक तथा शारीरिक उन्नति के लेख ही छापे जायेंगे। राजनैतिक तथा अश्लील लेख भेजने का कोई भी सज्जन कष्ट न करें।
4. लेखों को घटाने-बढ़ाने और छापने, न छापने का अधिकार सम्पादक का रहेगा, परन्तु लेख प्रकाशित नहीं होने पर सम्पादक उत्तरदायी नहीं होगा। लेख सरल भाषा में कागज के एक ओर ही स्वच्छ लिखे हों।
5. ग्राहकों को पता व ग्राहक नम्बर साफ़-साफ़ लिखना चाहिए। उत्तर के लिए जबाबी कार्ड भेजना आवश्यक है।
6. साधन का वार्षिक शुल्क रुपये 150/= है। एक प्रति का शुल्क रुपये 16/= है। केवल विशेषांक का शुल्क रुपये 20/= है। भारतवर्ष से बाहर दूसरे देशों में रहने वालों के लिए साधन का वार्षिक शुल्क रुपये 1400/= है। एक वर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाये जायेंगे।
7. दस वर्षीय अवधि की सदस्यता शुल्क रुपये 1350/ है और बीस वर्षीय अवधि की सदस्यता शुल्क रुपये 2500/ है।
8. साधन का वार्षिक शुल्क साधारण मनी-आर्डर, ई. एम. ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा चैक (जो मथुरा में देय हो) द्वारा भेज सकते हैं, जो "साधन हिन्दी मन्थली" के नाम 813, डैम्पियर नगर, मथुरा-281001 को भेजा जाये।
9. सत्संग साहित्य जो आप मंगाना चाहते हैं उसका कुल मूल्य एवं डाकखर्च कार्यालय से पता कर मनी आर्डर ई.एम.ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा चैक द्वारा भेजकर मंगाया जा सकता है।

Licence to Post without Prepayment: Licence No.-AGRA/WPP-01/2012-2014
"Registered" Postal Regd.No.MTR/28/2012-2014: R.N.I. No- 2358 / 57
Date of Publication: 8th to 15th of every Month

साधन

ॐ

मथुरा

प्रबन्ध सम्पादक : आलोक कुमार, साधन हिन्दी मन्थली, मथुरा
प्रकाशक : आलोक कुमार, साधन हिन्दी मन्थली, डैम्पियर नगर, मथुरा
मुद्रक : आलोक कुमार, साधन प्रेस, डैम्पियर नगर, मथुरा

E-mail: sadhanhindimonthly@gmail.com, sadhanhindimonthly@yahoo.co.in
Website: www.sadhan.in, www.facebook.com/sadhan.ramashram
Ph.: 0565-3290790, Mob.: 09319680800